(सरकारी गजट उत्तर प्रदेश भाग-4 में प्रकाशित)

*सचिव, माध्यमिक शिक्षा परिषद्, उ०प्र०, प्रयागराज की विज्ञप्ति संख्या परिषद्–**9/947**,*
*के सातत्य में शैक्षिक सत्र **2020-21** के लिए स्वीकृत नवीनतम पाठ्यक्रम पर*
आधारित एकमात्र पाठ्य-पुस्तक

हिन्दी

कक्षा-9

सम्पादक

डॉ० रमेश कुमार उपाध्याय
एम०ए० (हिन्दी, संस्कृत), पी-एच०डी०
भूतपूर्व साहित्य विभागाध्यक्ष,
हिन्दी साहित्य सम्मेलन, प्रयागराज

डॉ०योगेन्द्र नारायण पाण्डेय
एम०ए० (हिन्दी, संस्कृत),
बी० एड०, पी-एच०डी०
स्नातकोत्तर (शिक्षा प्रशासन) वरिष्ठ प्रवक्ता
महगाँव इण्टर कॉलेज, महगाँव,
कौशाम्बी

माध्यमिक शिक्षा परिषद्, उ० प्र०, प्रयागराज द्वारा
स्वीकृत पाठ्यक्रम पर आधारित

संस्करण 2020-21

प्राक्कथन

आज के विद्यार्थी ही कल के भविष्य हैं। उनके विचारों और भावनाओं को अच्छी तरह से ढालने में ही राष्ट्रीय शिक्षा की सफलता निहित है। जो आदर्श विद्यार्थी-जीवन में उनके सम्मुख रहेगा, वही उनको अपने भावी जीवन में पग-पग पर प्रोत्साहित करेगा। इन्हीं बातों को ध्यान में रखते हुए पाठ्यक्रम में समय-समय पर परिवर्तन होता रहा है। पाठ्यक्रम शिक्षण-प्रक्रिया का एक महत्त्वपूर्ण अंग है। शिक्षा रूपी सरिता के दोनों तट (अध्यापक और विद्यार्थी) पाठ्यक्रम द्वारा सम्बन्ध स्थापित करते हैं। माध्यमिक शिक्षा के क्षेत्र में गुणात्मक सुधार लाने के लिए राज्य सरकार ने पाठ्य-पुस्तकों के प्रकाशन का द्वार प्रकाशकों के लिए खोल दिया है। इसलिए अपना उत्तरदायित्व समझते हुए हमने अपनी पाठ्य-पुस्तकों में वर्तमान शैक्षिक उद्देश्यों को ध्यान में रखते हुए 'गागर में सागर' भरने का भरसक प्रयास किया है।

माध्यमिक शिक्षा परिषद्, उ0 प्र0, प्रयागराज द्वारा **कक्षा 9 हिन्दी** के लिए नवीनतम पाठ्यक्रमानुसार हिन्दी गद्य, हिन्दी काव्य, संस्कृत एवं एकांकी निर्धारित हैं। उक्त सभी को एक पुस्तक में समाविष्ट किया गया है। प्रत्येक लेखक एवं कवि से सम्बन्धित उसका जीवन-परिचय, साहित्यिक परिचय, कृतियाँ एवं भाषा-शैली अलग-अलग अनुच्छेद में दिये गये हैं जिससे अध्ययन-अध्यापन में विशेष सुविधा होगी। पाठ के अन्त में विस्तृत उत्तरीय, लघु उत्तरीय, अतिलघु उत्तरीय, व्याकरण-बोध एवं आन्तरिक मूल्यांकन सम्बन्धी प्रश्न के अन्तर्गत महत्त्वपूर्ण प्रश्नों को समाहित किया गया है।

इसके अतिरिक्त ख्यातिप्राप्त एकांकीकारों की एकांकियों का चयन किया गया है, जो सामाजिक एवं यथार्थ जीवन से सम्बद्ध हैं। संस्कृत में अच्छे लेखकों एवं कवियों की रचनाओं का सृजन किया गया है, जो ज्ञानवर्द्धक एवं सुरुचिपूर्ण हैं। हिन्दी एवं संस्कृत व्याकरण का भी इस पुस्तक में समावेश है। व्याकरण के अनेक महत्त्वपूर्ण पहलुओं पर भी प्रकाश डाला गया है।

माध्यमिक शिक्षा परिषद्, उत्तर प्रदेश, प्रयागराज द्वारा आमन्त्रित विषय-विशेषज्ञों का हम हृदय से आभार व्यक्त करते हैं, जिन्होंने विद्यार्थियों के मानसिक एवं बौद्धिक क्षमता के आधार पर पाठ्यक्रम का पुनर्गठन किया है। साथ ही हम उन सभी महान् लेखकों/कवियों के प्रति कृतज्ञता ज्ञापित करते हैं, जिनकी रचनाएँ इस पुस्तक में सम्मिलित की गयी हैं।

अन्त में, हम सभी पाठकों के बहुमूल्य रचनात्मक सुझावों को आमन्त्रित करते हुए उनके प्रति कृतज्ञता व्यक्त करते हैं।

सम्पादक एवं प्रकाशक

माध्यमिक शिक्षा परिषद्, उ०प्र० प्रयागराज द्वारा, निर्धारित नवीनतम पाठ्यक्रम

हिन्दी

कक्षा-9

पूर्णांक-100

इसमें 70 अंक की लिखित परीक्षा (समय-3 घंटा) एवं 30 अंक प्रोजेक्ट कार्य (आन्तरिक मूल्यांकन)

1. **(क)** हिन्दी गद्य के विकास का संक्षिप्त परिचय (भारतेन्दु युग तथा द्विवेदी युग) 5
   (ख) हिन्दी पद्य के विकास का संक्षिप्त परिचय–आदिकाल, मध्यकाल (केवल भक्तिकाल) 5
2. गद्य हेतु निर्धारित पाठ्यवस्तु से– 2+4+2=8
   सन्दर्भ–
   रेखांकित अंश की व्याख्या–
   तथ्यपरक प्रश्न का उत्तर–
   (पाठ–बात, मंत्र, गुरुनानक देव, गिल्लू, स्मृति, निष्ठामूर्ति कस्तूरबा, ठेले पर हिमालय, तोता)
3. काव्य हेतु निर्धारित पाठ्यवस्तु से– 2+4+2=8
   सन्दर्भ–
   व्याख्या–
   काव्य सौन्दर्य–
   (कबीर, मीरा, रहीम, भारतेन्दु हरिश्चन्द्र, मैथिलीशरण गुप्त, जयशंकर प्रसाद, सूर्यकान्त त्रिपाठी ''निराला'', सोहनलाल द्विवेदी, हरिवंश राय बच्चन, नागार्जुन, केदारनाथ अग्रवाल, शिवमंगल सिंह सुमन, सन्त रैदास)
4. संस्कृत के निर्धारित पाठ्यवस्तु से– 1+4=5
   (गद्यांश अथवा श्लोक का सन्दर्भ सहित अनुवाद)
   सन्दर्भ–
   अनुवाद–
   (पाठ–वन्दना, सदाचारः, पुरुषोत्तमः रामः, सिद्धिमन्त्रः, सुभाषितानि, परमहंस रामकृष्णः, कृष्णः गोपालनन्दनः)
5. निर्धारित एकांकी से–(कथानक, चरित्र-चित्रण एवं तथ्याधारित प्रश्न) 3
   (एकांकी–दीपदान, नये मेहमान, व्यवहार, लक्ष्मी का स्वागत, सीमा रेखा)
6. निर्धारित पाठों के लेखकों तथा कवियों का जीवन परिचय एवं रचनाएँ– 3+3=6

7. **(1)** पाठ्य-पुस्तक से एक श्लोक– 2
(जो प्रश्नपत्र में न आया हो)
(2) संस्कृत के निर्धारित पाठों से पाठों पर आधारित दो प्रश्नों का उत्तर संस्कृत में (अतिलघु उत्तरीय) 2

8. काव्य सौन्दर्य के तत्त्व– 2+2+2=6
1. रस–शृंगार एवं वीर (स्थायीभाव, परिभाषा, उदाहरण, पहचान)
2. छन्द–चौपाई एवं दोहा-लक्षण, उदाहरण।
3. अलंकार–शब्दालंकार, अनुप्रास, यमक, श्लेष–परिभाषा, उदाहरण, पहचान।

9. हिन्दी व्याकरण तथा शब्द रचना– 2+2+2+2=8
क–वर्तनी तथा विराम चिन्ह
ख–शब्द रचना–तद्भव, तत्सम्, विलोम, पर्यायवाची
ग–समास-अव्ययीभाव, तत्पुरुष (परिभाषा, उदाहरण)
घ–मुहावरे एवं लोकोक्तियाँ–अर्थ एवं वाक्य प्रयोग

10. संस्कृत व्याकरण– 2+2+2=6
क–सन्धि-दीर्घ, गुण (परिभाषा, उदाहरण, पहचान)
ख–शब्द रूप–राम, हरि, भानु, अस्मद्
ग–धातुरूप–गम्, भू, कृ, (लट्, लोट्, विधिलिंग, लङ् तथा लृट् लकार)

11. **क**–हिन्दी के दो सरल वाक्यों का संस्कृत में अनुवाद 2
ख–पत्र लेखन (प्रार्थना-पत्र) 4

आन्तरिक मूल्यांकन– 30 अंक
शैक्षणिक सत्र में प्रत्येक दो माह में–
प्रथम–अगस्त माह में – 10 अंक –वाचन (वाद-विवाद, भाषण, विचाराभिव्यक्ति आदि)
द्वितीय–अक्टूबर माह में – 10 अंक – (व्याकरण सम्बन्धी)
तृतीय–दिसम्बर माह में – 10 अंक – सृजनात्मक (नाटक, कहानी, कविता, पत्र लेखन आदि) अंक योग-30

निर्धारित पाठ्यवस्तु–(गद्य)

पाठ	**लेखक**
बात	प्रताप नारायण मिश्र
मंत्र	प्रेमचन्द
गुरुनानक देव	हजारी प्रसाद द्विवेदी
गिल्लू	महादेवी वर्मा
स्मृति	श्रीराम शर्मा
निष्ठामूर्ति कस्तूरबा	काका कालेलकर
ठेले पर हिमालय.....	धर्मवीर भारती
तोता	रवीन्द्रनाथ टैगोर
सड़क सुरक्षा एवं यातायात के नियम	

निर्धारित पाठ्यवस्तु –(काव्य)

कबीर	साखी
मीराबाई	पदावली
रहीम	दोहा
भारतेन्दु हरिश्चन्द्र	प्रेम माधुरी
मैथिलीशरण गुप्त	पंचवटी
जयशंकर प्रसाद	पुनर्मिलन
सूर्यकान्त त्रिपाठी ''निराला''	दान
सोहन लाल द्विवेदी	उन्हें प्रणाम
हरिवंश राय बच्चन	पथ की पहचान
नागार्जुन	बादल को घिरते देखा
केदारनाथ अग्रवाल	अच्छा होता, सितार-संगीत की रात
शिवमंगल सिंह सुमन	युगवाणी
संत रैदास	प्रभु जी तुम चन्दन हम पानी

निर्धारित पाठ्यवस्तु – (संस्कृत)

वन्दना, सदाचारः, पुरुषोत्तमः रामः, सिद्धिमन्त्रः, सुभाषितानि, परमहंस रामकृष्णः, कृष्णः गोपालनन्दनः

निर्धारित एकांकी

दीपदान	डॉ॰ रामकुमार वर्मा
नये मेहमान	उदयशंकर भट्ट
व्यवहार	सेठ गोविन्द दास
लक्ष्मी का स्वागत	उपेन्द्रनाथ ''अश्क''
सीमा रेखा	विष्णु प्रभाकर

●●●

विषय-सूची

हिन्दी गद्य

●	भूमिका			...	9
●	विभिन्न गद्य-विधाएँ			...	15
●	अध्ययन-अध्यापन			...	26
1.	प्रतापनारायण मिश्र	–	बात	...	29
2.	प्रेमचन्द	–	मन्त्र	...	36
3.	आचार्य हजारीप्रसाद द्विवेदी	–	गुरु नानकदेव	...	48
4.	महादेवी वर्मा	–	गिल्लू	...	56
5.	श्रीराम शर्मा	–	स्मृति	...	62
6.	काका कालेलकर	–	निष्ठामूर्ति कस्तूरबा	...	70
7.	धर्मवीर भारती	–	ठेले पर हिमालय	...	77
8.	रवीन्द्रनाथ टैगोर	–	तोता	...	84
9.	सड़क सुरक्षा एवं यातायात के नियम	–		...	90
●	टिप्पणी			...	95

हिन्दी काव्य

●	भूमिका			...	97
●	अध्ययन-अध्यापन			...	108
1.	कबीरदास	–	साखी	...	110
2.	मीराबाई	–	पदावली	...	115
3.	रहीम	–	दोहा	...	119
4.	भारतेन्दु हरिश्चन्द्र	–	प्रेम-माधुरी	...	122
5.	मैथिलीशरण गुप्त	–	पंचवटी	...	127
6.	जयशंकर प्रसाद	–	पुनर्मिलन	...	132
7.	सूर्यकान्त त्रिपाठी 'निराला'	–	दान	...	138
8.	सोहनलाल द्विवेदी	–	उन्हें प्रणाम	...	143
9.	हरिवंशराय बच्चन	–	पथ की पहचान	...	148
10.	नागार्जुन	–	बादल को घिरते देखा है	...	152
11.	केदारनाथ अग्रवाल	–	अच्छा होता, सितार-संगीत की रात	...	157
12.	शिवमंगल सिंह 'सुमन'	–	युगवाणी	...	162
13.	संत रैदास	–	प्रभुजी तुम चन्दन हम पानी	...	167
●	टिप्पणी	–		...	170

संस्कृत

प्रथमः पाठः	–	वन्दना	...	174
द्वितीयः पाठः	–	सदाचारः	...	176
तृतीयः पाठः	–	पुरुषोत्तमः रामः	...	179
चतुर्थः पाठः	–	सिद्धिमन्त्रः	...	182
पञ्चमः पाठः	–	सुभाषितानि	...	185
षष्ठः पाठः	–	परमहंसः रामकृष्णः	...	188
सप्तमः पाठः	–	कृष्णः गोपालनन्दनः	...	191

एकांकी

- भूमिका 194
- संकलित एकांकियों का सारांश 203

1. **डॉ॰ रामकुमार वर्मा** 207
   दीपदान
2. **उदयशंकर भट्ट** 221
   नये मेहमान
3. **सेठ गोविन्ददास** 231
   व्यवहार
4. **उपेन्द्रनाथ 'अश्क'** 242
   लक्ष्मी का स्वागत
5. **विष्णु प्रभाकर** 252
   सीमा-रेखा

व्याकरण

- काव्य-सौन्दर्य के तत्त्व 264
  (रस, छन्द एवं अलंकार)
- हिन्दी व्याकरण तथा शब्द-रचना 268
- संस्कृत व्याकरण 290
  (क) सन्धि (ख) संज्ञा शब्द-रूप (ग) धातु-रूप
- हिन्दी से संस्कृत में अनुवाद 295
- पत्र लेखन 300

हिन्दी गद्य

भूमिका

गद्य क्या है?–छन्द, ताल, लय एवं तुकबन्दी से मुक्त तथा विचारपूर्ण एवं वाक्यबद्ध रचना को 'गद्य' कहते हैं। सामान्यतः दैनिक जीवन में प्रयुक्त होनेवाली बोलचाल की भाषा में गद्य का ही प्रयोग किया जाता है। गद्य का लक्ष्य विचारों या भावों को सहज, सरल एवं सामान्य भाषा में विशेष प्रयोजन सहित सम्प्रेषित करना है। ज्ञान-विज्ञान से लेकर कथा-साहित्य आदि की अभिव्यक्ति का माध्यम साधारण व्यवहार की भाषा गद्य ही है, जिसका प्रयोग सोचने, समझने, वर्णन, विवेचन आदि के लिए होता है। वक्ता जो कुछ सोचता है, उसे तत्काल गद्य के रूप में व्यक्त भी कर सकता है। ज्ञान-विज्ञान की समृद्धि के साथ ही गद्य की उपादेयता और महत्ता में वृद्धि होती जा रही है। किसी कवि या लेखक के हृद्‌गत भावों को समझने के लिए ज्ञान की आवश्यकता है और गद्य ज्ञान-वृद्धि का एक सफल साधन है। इसीलिए इतिहास, भूगोल, राजनीतिशास्त्र, धर्म, दर्शन और विज्ञान के क्षेत्र में ही नहीं, अपितु नाटक, कथा-साहित्य आदि में भी इसका एकच्छत्र प्रभाव स्थापित हो गया है। यदि विचारपूर्वक देखा जाय तो आधुनिक हिन्दी-साहित्य की सर्वाधिक महत्त्वपूर्ण घटना गद्य का आविष्कार ही है और गद्य का विकास होने पर ही हमारे साहित्य की बहुमुखी उन्नति भी सम्भव हो सकी है।

हिन्दी गद्य के सम्बन्ध में यह धारणा है कि मेरठ और दिल्ली के आस-पास बोली जानेवाली खड़ीबोली के साहित्यिक रूप को ही हिन्दी गद्य कहा जाता है। भाषाविज्ञान की दृष्टि से ब्रजभाषा, खड़ीबोली, कन्नौजी, हरियाणवी, बुन्देलखण्डी, अवधी, बघेली और छत्तीसगढ़ी इन आठ बोलियों को हिन्दी गद्य के अन्तर्गत सम्मिलित किया गया है। हिन्दी गद्य के प्राचीनतम प्रयोग हमें 'राजस्थानी' एवं 'ब्रजभाषा' में मिलते हैं।

गद्य और पद्य में अन्तर–हिन्दी साहित्य को दो भागों में बाँटा गया है–(1) गद्य साहित्य तथा (2) पद्य (काव्य) साहित्य। विषय की दृष्टि से गद्य और पद्य में यह अन्तर है कि गद्य के विषय विचारप्रधान और पद्य के विषय भावप्रधान होते हैं। दूसरी भाषाओं के समान इस भाषा के साहित्य में भी पद्य का अवतरण गद्य के बहुत पहले हुआ है। पद्य में कार्य की अनुभूति, उक्ति-वैचित्र्य, सम्प्रेषणीयता और अलंकार की प्रवृत्ति देखी जाती है, जबकि गद्य में लेखक अपने विचारों को अभिव्यक्त करता है। गद्य में तर्क, बुद्धि, विवेक, चिन्तन का अंकुश होता है तो पद्य में स्वतन्त्र कल्पना की उड़ान होती है। गद्य में शब्द, वाक्य, अर्थ आदि सभी प्रायः सामान्य होते हैं, जबकि पद्य में विशिष्ट। कविता शब्दों की नयी सृष्टि है, इसलिए इसका कोई भी शब्द कोशीय अर्थ से प्रतिबन्धित नहीं होता, जीवन की अनुभूतियों से उसका भावात्मक सम्बन्ध होता है, जबकि गद्य भावात्मक सन्दर्भों के स्थान पर उनके वस्तुनिष्ठ प्रतीकात्मक अर्थ ग्रहण करता है। गद्य को 'निर्माणात्मक अभिव्यक्ति' कहा गया है अर्थात् ऐसी अभिव्यक्ति जिसमें शब्द निर्माता के चारों ओर प्रयोग के लिए तैयार रहते हैं। गद्य की भाषा काव्य की अपेक्षा अधिक स्पष्ट, व्याकरणसम्मत और व्यवस्थित होती है। उक्ति-वैचित्र्य और अलंकरण की प्रवृत्ति भी गद्य की अपेक्षा काव्य में अधिक होती है। गद्य में विस्तार अधिक होने के कारण किसी बात को खोलकर कहने की प्रवृत्ति रहती है, जबकि काव्य में किसी बात को संकेत रूप में ही कहने की प्रवृत्ति होती है। गद्य में यथार्थ, वस्तुपरक और तथ्यात्मक वर्णन पाया जाता है, जबकि काव्य में वर्णन सूक्ष्म, संकेतात्मक होता है। गद्य में विरला ही वाक्य अपूर्ण होता है, काव्य में विरला ही वाक्य पूर्ण होता है। इस प्रकार गद्य और पद्य विषय, भाषा, प्रस्तुति, शिल्प आदि की दृष्टि से अभिव्यक्ति के सर्वथा भिन्न दो रूप हैं और दोनों के दृष्टिकोण एवं प्रयोजन भी भिन्न होते हैं। गद्य में व्याकरण के नियमों की अवहेलना नहीं की जा सकती, जबकि पद्य में व्याकरण के नियमों पर विशेष ध्यान नहीं दिया जाता। यद्यपि ऐसा नहीं है कि गद्य में भावपूर्ण चिन्तनशील मनःस्थितियों की अभिव्यक्ति नहीं हो सकती और पद्य में विचारों की अभिव्यक्ति नहीं हो सकती, किन्तु सामान्यतः गद्य एवं पद्य की प्रकृति उपर्युक्त प्रकार की ही होती है।

हिन्दी गद्य का स्वरूप और विकास

यद्यपि वर्तमान में प्रचलित हिन्दी भाषा खड़ीबोली का परिनिष्ठित एवं साहित्यिक रूप है, परन्तु खड़ीबोली स्वयं में कोई बोली नहीं है। इसका विकास कई क्षेत्रीय बोलियों के समन्वय के फलस्वरूप हुआ है। विद्वानों ने इसके प्राचीन रूप पर आधारित तत्त्वों की खोज करने के बाद यह माना है कि खड़ीबोली का विकास मुख्यतः ब्रजभाषा एवं राजस्थानी गद्य से हुआ है। कुछ विद्वान् इसको दक्खिनी एवं अवधी गद्य का सम्मिश्रित रूप भी मानते हैं। आज हिन्दी गद्य का जो साहित्यिक रूप है, उसमें कई क्षेत्रीय बोलियों का विकास दृष्टिगोचर होता है।

हिन्दी गद्य के आविर्भाव के सम्बन्ध में विद्वानों के अलग-अलग मत हैं। कुछ 10वीं शताब्दी मानते हैं, तो बहुतेरे 13वीं शताब्दी। 'राजस्थानी' एवं 'ब्रजभाषा' में हमें गद्य के प्राचीनतम प्रयोग मिलते हैं। राजस्थानी गद्य की समय-सीमा 11वीं शताब्दी से 14वीं शताब्दी तथा ब्रजभाषा गद्य की समय-सीमा 14वीं शताब्दी से 16वीं शताब्दी तक मानना उचित प्रतीत होता है। अतः यह स्पष्ट है कि 10वीं-11वीं से 13वीं शताब्दी के मध्य ही हिन्दी गद्य का आविर्भाव हुआ था। अध्ययन की दृष्टि से हिन्दी गद्य साहित्य के विकास को निम्नलिखित कालक्रमों में विभाजित किया जा सकता है–

1.	पूर्व भारतेन्दु-युग अथवा प्राचीन युग	–	13वीं शताब्दी से 1868 ई0 तक
2.	भारतेन्दु-युग	–	सन् 1868 ई0 से 1900 ई0 तक
3.	द्विवेदी-युग	–	सन् 1900 ई0 से 1922 ई0 तक
4.	शुक्ल-युग (छायावादी-युग)	–	सन् 1919 ई0 से 1938 ई0 तक
5.	शुक्लोत्तर-युग (छायावादोत्तर-युग)	–	सन् 1938 ई0 से 1947 ई0 तक
6.	स्वातन्त्र्योत्तर-युग	–	सन् 1947 ई0 से अब तक

प्राचीन युग–इस युग के अन्तर्गत हिन्दी गद्य के उद्‌भव से भारतेन्दु-युग से पूर्व तक का समय लिया गया है। वस्तुतः हिन्दी गद्य-साहित्य के आदिकाल में हिन्दी गद्य के प्राचीन रूप ही यत्र-तत्र उपलब्ध होते हैं। राजस्थान व दक्षिण भारत में तो अवश्य हिन्दी गद्य के प्रारम्भिक रूप की झलक मिलती है। उत्तर भारत में ब्रजभाषा गद्य के ही उदाहरण अधिक मात्रा में प्राप्त होते हैं। प्राचीन युग में काव्य-रचना के साथ-साथ गद्य-रचना की दिशा में भी कुछ स्फुट प्रयास लक्षित होते हैं। 'राउलवेल' (चम्पू), 'उक्ति-व्यक्ति-प्रकरण' और 'वर्णरत्नाकर' इस सन्दर्भ में उल्लेखनीय रचनाएँ हैं। कुछ विद्वान् 'राउलवेल' को ही राजस्थानी गद्य की प्राचीनतम रचना मानते हैं। 'राउलवेल' (राजकुल विलास) एक शिलांकित कृति है, जिसका पाठ मुम्बई के प्रिंस ऑफ वेल्स संग्रहालय से उपलब्ध कर प्रकाशित कराया गया है। विद्वानों ने इसका रचनाकाल 11वीं शताब्दी माना है। इसकी रचना 'राउल' नायिका के नख-शिख वर्णन के प्रसंग में हुई है। आरम्भ में इस कृति के रचयिता 'रोडा' ने राउल के सौन्दर्य का वर्णन पद्य में किया है और लेख के प्रारम्भ तथा अन्त में गद्य का प्रयोग किया गया है। दूसरी रचना 'उक्ति-व्यक्ति-प्रकरण' है, जिसकी रचना महाराज गोविन्दचन्द्र के सभा-पण्डित दामोदर शर्मा ने 12वीं शताब्दी में की थी। इस ग्रन्थ की भाषा का एक उदाहरण इस प्रकार है–"वेद पढ़ब, स्मृति अभ्यासिब, पुराण देखब, धर्म करब।" इससे गद्य और पद्य दोनों शैलियों की हिन्दी भाषा में तत्सम शब्दावली के प्रयोग की बढ़ती हुई प्रवृत्ति का पता चलता है। मैथिली के प्राप्त ग्रन्थों में ज्योतिरीश्वर का 'वर्णरत्नाकर' ग्रन्थ ऐसी तीसरी रचना है। मैथिली-हिन्दी में रचित गद्य की यह पुस्तक डॉ0 सुनीतिकुमार चटर्जी और पण्डित बबुआ मिश्र के सम्पादन में बंगाल एशियाटिक सोसाइटी से प्रकाशित हो चुकी है। डॉ0 हजारीप्रसाद द्विवेदी के मतानुसार इसकी रचना 14वीं शताब्दी में हुई होगी।

इसके उपरान्त तो राजस्थानी गद्य, ब्रजभाषा गद्य और खड़ीबोली का प्रारम्भिक गद्य-साहित्य आदि ही विचारणीय सामग्री है। हिन्दी-परिवार की भाषाओं में गद्य का उन्मेष कालक्रम से सर्वप्रथम राजस्थानी में प्राप्त होता है। राजस्थानी में गद्य-परम्परा निश्चित रूप से ईसा की 13वीं शताब्दी से प्रारम्भ होती है। राजस्थानी गद्य के प्रारम्भिक विकास में जैन विद्वानों का विशेष योग रहा है और इसमें कोई सन्देह नहीं कि वह ब्रजभाषा के गद्य-साहित्य की अपेक्षा अधिक प्राचीन व समृद्ध है। राजस्थानी गद्य

दानपत्रों, पट्टे, परवानों, सनदों, वार्त्ताओं और टीकाओं आदि के रूप में उपलब्ध होता है। उस पर संस्कृत अपभ्रंश की परम्परा का प्रभाव स्वाभाविक रूप से पड़ा है। राजस्थानी की प्रमुख गद्य रचनाएँ हैं–'आराधना', 'बालशिक्षा टीका', 'जगत सुन्दरी प्रयोगमाला', 'अतिचार', 'नवकार' 'व्याख्यान टीका', 'सर्वतीर्थ नमस्कार स्तवन', 'तत्त्वविचार प्रकरण', 'पृथ्वीचन्द्र चरित्र', 'धनपाल कथा', 'तपोगच्छ गुर्वावली', 'अंजनासुन्दरी कथा' आदि।

ब्रजभाषा गद्य का सूत्रपात संवत् 1400 वि0 के आस-पास माना जाता है। ब्रजभाषा गद्य का प्राचीनतम रूप **आचार्य रामचन्द्र शुक्ल** के अनुसार सन् 1457 ई0 तक का ही उपलब्ध होता है और उन्होंने नाथपन्थी योगियों के धार्मिक उपदेशों में से कुछ उद्धृत कर संवत् 1400 वि0 के आस-पास का ब्रजभाषा गद्य मान लिया है। धार्मिक और आध्यात्मिक विषयों के साथ वैद्यक, ज्योतिष, इतिहास, भूगोल, गणित, धनुर्वेद, प्रश्न, शकुन आदि विषयों का प्रतिपादन ब्रजभाषा गद्य में हुआ है। ब्रजभाषा-गद्य-साहित्य स्थूलतः चार वर्गों में विभक्त किया जा सकता है–मौलिक, टीकात्मक, अनूदित और पद्यप्रधान रचनाओं में यत्र-तत्र प्रयुक्त टिप्पणीपरक गद्य। मौलिक (स्वतन्त्र) गद्य वल्लभ सम्प्रदाय के वचनामृतों, वार्त्ताग्रन्थों, कथा पुस्तकों, दर्शन विषयक ग्रन्थों, वैद्यक, ज्योतिष आदि उपयोगी विषयों, रचनाओं और पत्रों, शिलालेखों तथा कागज-पत्रों के रूप में उपलब्ध होता है। टीका, टिप्पणी, तिलक और भावना शीर्षक से व्याख्यात्मक गद्य प्राप्त होता है। इसी प्रकार अनुवाद अथवा छायानुवाद रूप में लिखित ग्रन्थ भी प्राप्त है। गद्यप्रधान ग्रन्थों में टिप्पणीपरक गद्य चर्चा, वार्त्ता, तिलक या वचनिका शीर्षक लिखा गया है। 17वीं शताब्दी तक की लिखी हुई जो रचनाएँ उपलब्ध हैं, उनमें गोस्वामी विट्ठलनाथ का 'शृंगार रस-मण्डन', गोकुलनाथ जी की 'चौरासी वैष्णवन की वार्त्ता' और 'दो सौ बावन वैष्णवन की वार्त्ता', नाभादास जी का 'अष्टयाम', 'भक्तमाल', बैकुण्ठमणि शुक्ल के 'अगहन महातम' एवं 'वैसाख महातम', ध्रुवदास कृत 'सिद्धान्तविचार' तथा लल्लूलाल कृत 'माधव विलास' विशेष रूप से उल्लेखनीय हैं। इन्हीं के साथ टीकाओं की परम्परा भी चलती रही। प्रमुख टीकाएँ हैं– भुवनदीपिका टीका, एकादसस्कन्ध टीका, हितसंवर्धिनी टीका, धरनीधरदास की टीका और लोकनाथ की गद्य-पद्यमयी टीका।

आधुनिक काल में जिस भाषा में हिन्दी-गद्य लिखा जा रहा है, वह **खड़ीबोली** गद्य ही है। आचार्य रामचन्द्र शुक्ल ने खड़ीबोली गद्य का प्रारम्भ अकबर के दरबारी कवि गंग द्वारा लिखित 'चन्द छन्द बरनन की महिमा' से माना है। मुसलमानों के शासन-काल में भी खड़ीबोली का उपयोग होता था और वह शिष्ट समाज की भाषा थी तथा उसका उपयोग जनसाधारण के लिए भी होता था। हाँ, यह अवश्य था कि वह एक ऐतिहासिक भाषा के रूप में नहीं थी। ज्यों-ज्यों उसका उपयोग अधिक होने लगा, त्यों-त्यों वह साहित्य-सिंहासन पर प्रतिष्ठित होने के अनुकूल समझी जाने लगी। अंग्रेजों के प्रभाव से सर्वथा पृथक् फोर्ट विलियम कॉलेज की स्थापना के पहले भी पटियाला के रामप्रसाद निरंजनीकृत 'योग वासिष्ठ' (सन् 1741 ई0) में, बसवा (म0 प्र0) निवासी पं0 दौलतराम कृत 'जैन पद्मपुराण' के भावानुवाद (1761 ई0) में, जनप्रह्लाद के 'नृसिंह तापनी उपनिषद्' (1719 ई0) में, मथुरानाथ शुक्ल के 'पंचांग दर्शन' (1880 ई0) नामक ज्योतिष ग्रन्थ की रचना में और इसी परम्परा में आगे चलकर मुंशी सदासुखलाल के 'विष्णु पुराण' के आधार पर रचित 'सुखसागर', इंशा अल्ला खाँ की 'रानी केतकी की कहानी', लल्लूलाल के 'प्रेम सागर' व सदल मिश्र के 'नासिकेतोपाख्यान' आदि ग्रन्थों में खड़ीबोली गद्य की अखण्ड परम्परा परिलक्षित होती है। इनमें से अन्तिम चार लेखकों–मुंशी सदासुखलाल, इंशा अल्ला खाँ, लल्लूलाल व सदल मिश्र को विशेष स्थान प्राप्त है और इनकी कृतियों का रचनाकाल सन् 1803 ई0 के लगभग माना जाता है। इनमें से सदल मिश्र एवं पं0 लल्लूलाल फोर्ट विलियम कॉलेज, कलकत्ता में प्राध्यापक थे, जबकि इंशा अल्ला खाँ लखनऊ के नवाब के दरबार में मुलाजिम थे तथा मुंशी सदासुखलाल दिल्ली के रहनेवाले थे।

मुंशी सदासुखलाल की कृति **'सुखसागर'** एक धार्मिक ग्रन्थ है। इसकी शैली आख्यात्मक है तथा भाषा पर पण्डिताऊपन एवं फारसी का प्रभाव है। इंशा अल्ला खाँ की रचना **'रानी केतकी की कहानी'** की शैली हास्यप्रधान है तथा इस पर उर्दू, अरबी एवं फारसी का प्रभाव है। लल्लूलाल की रचना **'प्रेमसागर'** में ब्रजभाषा का प्रभाव दृष्टिगोचर होता है तथा शैली आख्यात्मक है। सदल मिश्र की रचना **'नासिकेतोपाख्यान'** की भाषा में पूर्वीपन अधिक है। इसकी वाक्य-रचना शिथिल तथा शैली आख्यात्मक है।

खड़ीबोली गद्य के विकास में ईसाई धर्म प्रचारकों ने भी अपना योग दिया। बाइबिल का उन्होंने खड़ीबोली में अनुवाद कराया और उसे उत्तर भारत के विभिन्न स्थानों में वितरित कर अपने धर्म के साथ हिन्दी का भी प्रसार किया। आगे चलकर ईसाई धर्म-प्रचारकों के विरोध में ब्रह्मसमाज और आर्यसमाज आदि जिन समाजसुधार-आन्दोलनों का जन्म हुआ, उन्होंने भारतीय संस्कृति के मूल रूप की रक्षा करते हुए हिन्दी गद्य को भी प्रोत्साहित किया। ब्रह्मसमाज के प्रवर्तक राजा राममोहन राय ने 'बंगदूत' (सन् 1829 ई0) पत्र द्वारा हिन्दी का समर्थन किया और आर्यसमाज के संस्थापक स्वामी दयानन्द सरस्वती गुजराती होते हुए भी हिन्दी को आर्यभाषा के रूप में घोषित किया। स्वामी दयानन्द जी ने अपने 'सत्यार्थ प्रकाश' की रचना भी हिन्दी में की थी और पहली बार हिन्दी को राष्ट्रभाषा के रूप में देखने का प्रयास किया।

19वीं शताब्दी के पूर्वार्द्ध में शिक्षा-संस्थाओं के विकास के फलस्वरूप पाठ्य-पुस्तकों का निर्माण होने से हिन्दी गद्य का विकसित रूप हमारे सामने आया। खड़ीबोली गद्य के उत्थान में समाचार-पत्रों का भी महत्त्वपूर्ण योग रहा है। हिन्दी का सर्वप्रथम समाचार-पत्र 'उदन्त मार्तण्ड' 30 मई, सन् 1826 ई0 को कोलकाता में प्रकाशित हुआ। सन् 1833 ई0 तक ईस्ट इण्डिया कम्पनी ने शासकीय कार्यों के लिए फारसी भाषा को ही अपनाया और सर सैयद अहमद खाँ, गार्सा-द-तासी एवं जॉन वीम्स आदि ने उर्दू का पक्ष लेकर हिन्दी को रूढ़िवादी माना, लेकिन एफ0 एस0 ग्राउज ने हिन्दी का समर्थन करते हुए उर्दू का विरोध किया।

उक्त परिस्थितियों के मध्य **राजा शिवप्रसाद 'सितारेहिन्द'** और **लक्ष्मणसिंह** नामक दो विभूतियों ने साहित्य-जगत् में प्रवेश किया। राजा शिवप्रसाद 'सितारेहिन्द' हिन्दी के समर्थक थे। वे शिक्षा विभाग में उच्च अधिकारी थे। जब उन्होंने हिन्दी का विरोध होते हुए देखा तब हिन्दी में अरबी-फारसी के शब्दों का समावेश उचित माना। बाद में उनकी भाषा अरबी-फारसी शब्दों से कुछ इतना अधिक बोझिल हो गयी कि उसमें हिन्दीपन ही न रहा। राजा लक्ष्मणसिंह ने उनके विपरीत यह सिद्ध करने का प्रयास किया कि बिना अरबी-फारसी के शब्दों की अधिकता के भाषा में लोच और सौन्दर्य आ सकता है तथा भाव-व्यंजकता बनी रह सकती है। वे हिन्दी उसी भाषा को मानते हैं जिसमें संस्कृत शब्दों की अधिकता हो। कुछ अहिन्दी भाषा-भाषियों ने भी हिन्दी का समर्थन किया था, जिनमें नवीनचन्द्र राय तथा श्रद्धाराम फुल्लौरी आदि प्रमुख हैं।

भारतेन्दु-युग

हिन्दी साहित्य के क्षेत्र में **भारतेन्दु हरिश्चन्द्र** के उदय से एक नवीन क्रान्ति का श्रीगणेश हुआ, इसलिए हिन्दी गद्य के इस युग को भारतेन्दु-युग (1868 ई0 से 1900 ई0 तक) के नाम से जाना जाता है। भारतेन्दु जी से पूर्व हिन्दी गद्य का कोई निश्चित स्वरूप नहीं था। कुछ लेखकों की कृतियों में अरबी-फारसी शब्दों की प्रधानता थी, तो कुछ लेखकों की कृतियों में संस्कृत की तत्सम शब्दावली की। हिन्दी गद्य के ये दोनों ही रूप जनसामान्य की समझ से बाहर थे। भारतेन्दु जी ने पहली बार अपने गद्य में साधारण बोलचाल के शब्दों को स्थान देकर हिन्दी-गद्य को एक निश्चित रूप दिया और उसे एक प्रगतिशील भाषा प्रदान कर तत्कालीन साहित्यिक चेतना को जागृत किया। उन्होंने विभिन्न पत्र-पत्रिकाओं का सम्पादन किया, स्वयं लिखा और अन्य लेखकों को लेखन की प्रेरणा दी। चूँकि वर्तमान हिन्दी गद्य का पौधा भारतेन्दु जी ने ही रोपा था, इसलिए इन्हें हिन्दी गद्य का जनक कहा जाता है।

साधारणतः भारतेन्दु जी की सभी रचनाओं में अरबी-फारसी के शब्द प्रयुक्त हुए हैं, पर वे ही जो व्यवहार में निरन्तर प्रवेश पा चुके थे। ऐसे शब्द व्यवहार के क्षेत्र में जहाँ कुछ विकृत रूप में पाये गये, वहाँ उसी रूप में स्वीकार किये गये हैं; राजा शिवप्रसाद की भाँति तत्सम रूप में नहीं। दूसरी ओर संस्कृत शब्दों के तद्भव रूपों का भी बड़ी सुन्दरता से व्यवहार किया गया है। इसमें उन्होंने बोलचाल के व्यावहारिक रूपों का विशेष ध्यान रखा है। उनके प्रयुक्त शब्द इतने चलते हुए हैं कि आज भी हम अपनी नित्य की भाषा में उनका प्रयोग उन्हीं रूपों में करते हैं। इन तद्भव रूपों के प्रयोग से भाषा में कहीं शिथिलता या ग्राम्यत्व आ गया हो, यह बात भी नहीं है, वरन् इसके विपरीत भाषा और अधिक व्यावहारिक एवं भावव्यंजक हो गयी है।

इस प्रकार भारतेन्दु जी ने अपनी साहित्य-सेवा द्वारा हिन्दी-साहित्य में एक नूतन युग का निर्माण किया। अपने जीवन-काल में गद्य लेखकों व कवियों का एक अच्छा-सा मण्डल तैयार किया। उनके युग के गद्य-लेखकों में बालकृष्ण भट्ट, प्रतापनारायण मिश्र, श्रीनिवासदास, केशवदास भट्ट, कार्तिकप्रसाद खत्री, ठाकुर जगमोहन सिंह, राधाचरण गोस्वामी, अम्बिकादत्त व्यास, दुर्गाप्रसाद मिश्र आदि प्रमुख थे। भारतेन्दु के पश्चात् हिन्दी गद्य को स्थिरता और शक्ति प्रदान करने में बालकृष्ण भट्ट व प्रतापनारायण मिश्र ने अपना विशेष योग दिया और बदरीनारायण चौधरी 'प्रेमघन' ने तो एक नूतन व अलौकिक गद्य-शैली का रूप-निर्माण कर गद्य की शक्ति विशेष रूप से बढ़ायी। इसी काल में गोविन्दनारायण मिश्र व बालमुकुन्द गुप्त ने अपनी विभिन्न गद्य-शैलियों के प्रयोग द्वारा हिन्दी गद्य-साहित्य को समृद्ध किया। इस युग में गद्य की अनेक विधाओं पर लेखकों ने लेखनी चलायी।

● प्रमुख लेखक

भारतेन्दु हरिश्चन्द्र, बालकृष्ण भट्ट, प्रतापनारायण मिश्र, राधाकृष्णदास, बालमुकुन्द गुप्त, अम्बिकादत्त व्यास, किशोरीलाल गोस्वामी, श्रीनिवासदास, बदरीनारायण चौधरी 'प्रेमघन', कार्तिकप्रसाद खत्री, देवकीनन्दन खत्री।

● प्रमुख कृतियाँ

सत्य हरिश्चन्द्र, भारत-दुर्दशा, हठी हम्मीर, कलिकौतुक, नूतन ब्रह्मचारी, सौ अजान एक सुजान, नहुष, चन्द्रावली नाटिका, महाराणा प्रताप, शिव-शम्भु का चिट्ठा, चन्द्रकान्ता।

इस समय भारतीय जनता की मुक्ति चेतना का नया रूप-रंग साम्राज्यवाद विरोधी स्वर लिये था, इसी स्वर की प्रखर अभिव्यक्ति इस युग की पत्रिकाओं में हुई। हिन्दी गद्य की वैचारिक शक्ति से भारतेन्दु ने 'कविवचन सुधा', 'हरिश्चन्द्र मैगजीन', 'हरिश्चन्द्र चन्द्रिका', पं0 बालकृष्ण भट्ट ने 'हिन्दी प्रदीप', प्रतापनारायण मिश्र ने 'ब्राह्मण' तथा बदरीनारायण चौधरी 'प्रेमघन' ने 'आनन्द कादम्बिनी'–जैसी पत्र-पत्रिकाओं के माध्यम से ब्रिटिश साम्राज्यवाद विरोधी संग्राम खुलकर लड़ा। हिन्दी गद्य के विकास और प्रसार में भारतेन्दु-युग की पत्र-पत्रिकाओं के योगदान के अतिरिक्त अनुवादों की भूमिका को भी कम नहीं आँका जा सकता।

हिन्दी-गद्य-साहित्य के इस युग में हिन्दी गद्य की प्रेरणा देनेवाली राजनीतिक जागृति भी प्रमुख शक्ति थी। इसी युग में सन् 1893 ई0 में 'काशी नागरी प्रचारिणी सभा' की स्थापना हुई, जिसने हिन्दी साहित्य के विकास का एक नवीन अध्याय प्रारम्भ किया। इसी प्रकार 1897 ई0 में नागरी प्रचारिणी पत्रिका का प्रकाशन भी इस युग की अत्यन्त महत्त्वपूर्ण घटना है। इस युग के अन्य लेखकों में बाबू नवीनचन्द्र राय, बाबू तोताराम, राजा रामपाल सिंह, मोहनलाल विष्णुलाल पण्ड्या, भीमसेन शर्मा, देवीप्रसाद मुन्सिफ उल्लेखनीय हैं। अतः इसमें कोई सन्देह नहीं कि हिन्दी गद्य के विकास की दृष्टि से यह युग अर्थात् 1868 ई0 से 1900 ई0 तक का समय अत्यन्त महत्त्वपूर्ण है। इन वर्षों में न केवल खड़ीबोली का विकास हुआ, अपितु हिन्दी-गद्य-साहित्य की उन्नति भी हुई।

द्विवेदी-युग

भारतेन्दु हरिश्चन्द्र के पश्चात् हिन्दी गद्य के क्षेत्र में एक महान् व्यक्तित्व **आचार्य महावीरप्रसाद द्विवेदी** का आगमन हुआ। हिन्दी गद्य के इस युग का नामकरण उन्हीं के नाम पर हुआ। इण्डियन प्रेस, प्रयाग से सन् 1903 ई0 में 'सरस्वती' मासिक पत्रिका का प्रकाशन हिन्दी साहित्य की महत्त्वपूर्ण घटना है। 'सरस्वती' के सम्पादक के रूप में द्विवेदी जी ने हिन्दी भाषा और उसके गद्य के परिष्कार एवं परिमार्जन का कार्य आरम्भ किया। उन्होंने गद्य की त्रुटियों की ओर साहित्यकारों का ध्यान आकृष्ट किया, अपरिपक्व लेखकों की भाषा-शैली की आलोचना की और उन्हें सुझाव दिये तथा नये लेखकों को प्रोत्साहित भी किया। स्वयं द्विवेदी जी ने कला, इतिहास, राजनीति, अर्थशास्त्र, पुरातत्त्व और प्राचीन साहित्य पर श्रेष्ठ रचनाएँ प्रस्तुत कीं। शब्द-भण्डार की वृद्धि के अतिरिक्त गद्य की विविध शैलियाँ भी इस युग में विकसित हुईं। यों तो 'सरस्वती' के प्रथम वर्ष की सम्पादन समिति में कार्तिकप्रसाद खत्री, किशोरीलाल गोस्वामी, जगन्नाथदास रत्नाकर, राधाकृष्णदास और श्यामसुन्दरदास-जैसे महान् व प्रतिष्ठित हिन्दीसेवी थे, पर बाद में दो वर्षों तक केवल श्यामसुन्दरदास जी ने इसका सम्पादन कार्य सँभाला तथा सन् 1903 से 17 वर्षों तक तो महावीरप्रसाद द्विवेदी ही इसके सम्पादक रहे।

द्विवेदी-युग में विविध प्रकार की भाषा-शैलियों के जन्म के साथ-साथ गद्य के विविध रूपों का विकास हुआ। प्रेमचन्द, प्रसाद, बालमुकुन्द गुप्त, पद्मसिंह शर्मा, श्यामसुन्दरदास और रामचन्द्र शुक्ल-जैसे लेखक इसी युग की देन हैं। निबन्ध के क्षेत्र में स्वयं द्विवेदी जी के अतिरिक्त बालमुकुन्द गुप्त, पूर्णसिंह, यशोदानन्दन अखौरी, पद्मसिंह शर्मा, श्यामसुन्दरदास व रामचन्द्र शुक्ल का कार्य प्रशंसनीय है।

● प्रमुख लेखक

महावीरप्रसाद द्विवेदी, श्यामसुन्दरदास, मिश्रबन्धु, पद्मसिंह शर्मा, चन्द्रधरशर्मा 'गुलेरी', बद्रीनाथ भट्ट, पूर्णसिंह, पदुमलाल पुन्नालाल बख्शी।

● प्रमुख कृतियाँ

रसज्ञ-रंजन, साहित्य सीकर, नैषध चरित चर्चा, साहित्यालोचन, रूपक रहस्य, भाषाविज्ञान, काव्य के रूप, सिद्धान्त और अध्ययन।

कहानी का तो जन्म ही 'सरस्वती' से हुआ। पहले अंग्रेजी और संस्कृत साहित्य की प्रसिद्ध कृतियों के कहानी-रूपान्तर 'सरस्वती' में प्रकाशित हुए। इसके बाद हिन्दी की मौलिक कहानी ने जन्म लिया और धीरे-धीरे घटनाप्रधान, चरित्रप्रधान, वातावरणप्रधान, भावनाप्रधान कहानियाँ प्रकाश में आयीं। प्रेमचन्द, प्रसाद, कौशिक, चन्द्रधरशर्मा 'गुलेरी' और सुदर्शन इस युग के प्रतिनिधि कहानीकार हैं। उपन्यास और कहानी के क्षेत्र में प्रेमचन्द का उत्तराधिकार जिन लेखकों ने सफलतापूर्वक वहन किया, उनमें जैनेन्द्र कुमार, उग्र, कौशिक, अज्ञेय, चतुरसेन शास्त्री, भगवतीप्रसाद वाजपेयी, भगवतीचरण वर्मा, राहुल सांकृत्यायन, यशपाल, इलाचन्द्र जोशी, अमृतलाल नागर आदि के नाम स्मरणीय हैं।

पत्र-पत्रिकाओं में 'सरस्वती' के अतिरिक्त 'नागरी प्रचारिणी पत्रिका', 'इन्दु', 'माधुरी', 'मर्यादा', 'सुधा', 'जागरण', 'हंस', 'प्रभा', 'कर्मवीर', 'विशाल भारत' आदि ने हिन्दी साहित्य के सर्वतोमुखी विकास में बहुत बड़ी भूमिका अदा की।

उपन्यास साहित्य में देवकीनन्दन खत्री के चमत्कारप्रधान तिलस्मी उपन्यासों की परम्परा से हटकर मानव-चरित्र की ओर इस युग के रचनाकार सचेष्ट हुए। जैसे तिलस्मी, जासूसी, सामाजिक, ऐतिहासिक, पौराणिक, चरित्रप्रधान, भावप्रधान आदि सभी प्रकार के उपन्यास इस युग में लिखे गये। द्विवेदी-युग के उपन्यासकारों में प्रेमचन्द के अतिरिक्त किशोरीलाल गोस्वामी, गोपालराम गहमरी, वृन्दावनलाल वर्मा, विश्वम्भरनाथ कौशिक और चतुरसेन शास्त्री उल्लेखनीय हैं। भारतेन्दु के बाद नाटक के क्षेत्र में सर्वाधिक महत्त्वपूर्ण योगदान जयशंकर प्रसाद के ऐतिहासिक नाटकों का है। प्रसाद के परवर्ती नाटककारों में लक्ष्मीनारायण मिश्र, हरिकृष्ण प्रेमी, डॉ0 रामकुमार वर्मा, सेठ गोविन्ददास, उदयशंकर भट्ट आदि के नाम लिये जा सकते हैं।

द्विवेदी-युग के बाद तो हिन्दी गद्य-लेखकों के एक नवीन वर्ग का उदय हुआ जिसमें वृन्दावनलाल वर्मा, जैनेन्द्र, आचार्य हजारीप्रसाद द्विवेदी, निराला, भगवतीचरण वर्मा, नन्ददुलारे वाजपेयी, सेठ गोविन्ददास, डॉ0 रामकुमार वर्मा, अज्ञेय, इलाचन्द्र जोशी, गुलाबराय, राहुल सांकृत्यायन, महादेवी वर्मा, रामवृक्ष बेनीपुरी, माखनलाल चतुर्वेदी, सुमित्रानन्दन पन्त आदि उल्लेखनीय हैं। स्वतन्त्रता-प्राप्ति के पश्चात् तो हिन्दी को सभी क्षेत्रों में महत्त्वपूर्ण स्थान प्राप्त हुआ है। स्वाभाविक रूप में ज्यों-ज्यों हिन्दी गद्य के विविध साहित्यिक रूपों का विकास होता गया, त्यों-त्यों हिन्दी गद्य भी समृद्ध होता रहा।

अनेक संघर्षों का सामना करते-करते हिन्दी गद्य अब विकास-क्रम की सीमा तक पहुँच चुका है तथा उसे एक सार्वभौम रूप भी प्राप्त हो रहा है।

●●●

विभिन्न गद्य-विधाएँ

● निबन्ध

निबन्ध का अर्थ है—अच्छी तरह बँधा हुआ। संक्षेप में निबन्ध उस गद्य-रचना को कहते हैं, जिसमें लेखक किसी विषय पर अपने विचारों को सीमित, सजीव, स्वच्छन्द और सुव्यवस्थित रूप से व्यक्त करता है। आलोचकों ने निबन्ध को गद्य की कसौटी कहा है। निबन्ध में लेखक किसी भी विषय का पूर्ण विवेचन, विश्लेषण, परीक्षण, व्याख्या एवं मूल्यांकन करता है। वह विषय का निर्वाह अपनी इच्छानुसार करता है, जिसमें वह स्वतन्त्र रहता है। निबन्ध आत्मपरक होता है तथा इसमें आत्मीयता और भावमयता के साथ-साथ विचारों की तर्कपूर्ण अभिव्यक्ति होती है। आधुनिक हिन्दी निबन्ध संस्कृत के निबन्ध से पूर्णतया भिन्न है तथा अंग्रेजी के 'एसे' के अधिक निकट है। यद्यपि प्राचीन संस्कृत और प्राकृत साहित्य में निबन्ध तथा प्रबन्ध शब्दों का प्रयोग चिरकाल से मिलता है, पर जिस अर्थ में आजकल इन शब्दों का प्रयोग हो रहा है, उस अर्थ में पहले उसका प्रचलन कभी न था। इसलिए निबन्ध-लेखन की परम्परा का आरम्भ भारतेन्दु हरिश्चन्द्र से ही मानना चाहिए। अतः कहा जा सकता है कि भारतेन्दु-युग में निबन्ध का आविर्भाव हुआ, द्विवेदी-युग में इसका परिमार्जन हुआ और आधुनिक युग में इसमें प्रौढ़ता आ गयी। विषय एवं शैली की दृष्टि से इसके प्रमुख चार भेद हैं–

(अ) विचारात्मक निबन्ध—विचारात्मक निबन्ध में लेखक अपने चिन्तन और मनन के फलस्वरूप उत्पन्न विचारों को प्रस्तुत करता है। इसमें तर्कपूर्ण विवेचन, विश्लेषण एवं गवेषणा का आधिपत्य होता है तथा विषय भी अधिकांशतः दार्शनिक, मनोवैज्ञानिक, शास्त्रीय, विवेचनात्मक आदि होते हैं। प्रस्तुत संकलन में श्यामसुन्दर दास का 'कर्त्तव्य और सत्यता', विनोबा भावे का 'चिर तारुण्य की साधना' विचारात्मक निबन्ध ही हैं।

(ब) भावात्मक निबन्ध—भावात्मक निबन्ध में बुद्धितत्त्व गौण तथा भावतत्त्व प्रमुख होता है। ऐसे निबन्धों का लक्ष्य पाठक की बुद्धि की अपेक्षा उसके हृदय को प्रभावित करना होता है। इसकी भाषा सरल, सुन्दर, ललित तथा मधुर होती है तथा भावों को उत्कर्ष प्रदान करने के लिए कल्पना एवं अलंकारों का भी समुचित प्रयोग रहता है। इनका वाक्य-विन्यास सरल तथा शैली कवित्वपूर्ण होती है। प्रस्तुत संकलन में रामवृक्ष बेनीपुरी का 'नींव की ईंट' तथा वियोगी हरि का 'विश्व-मन्दिर' इसी प्रकार के निबन्ध हैं।

(स) वर्णनात्मक निबन्ध—ऐसे निबन्धों में किसी घटना, दृश्य अथवा वस्तु का विस्तार से वर्णन किया जाता है अर्थात् वस्तु, स्थान, व्यक्ति, दृश्य आदि के निरीक्षण के आधार पर आकर्षक, सरस एवं रमणीय वर्णन जिन निबन्धों में होता है, उन्हें वर्णनात्मक निबन्ध कहा जाता है। इनकी शैली दो प्रकार की होती है। एक में यथार्थ वर्णन तथा दूसरी में अलंकृत वर्णन होता है। यथार्थ वर्णन सूक्ष्म निरीक्षण एवं निजी अनुभूति के आधार पर होता है तथा अलंकृत वर्णन में कल्पना का प्रयोग होता है। ऐसे निबन्धों में चित्रात्मकता, रोचकता, कौतूहल और मानसिक प्रत्यक्षीकरण कराने की क्षमता होती है।

(द) विवरणात्मक निबन्ध—ऐतिहासिक तथा सामाजिक घटनाओं, स्थानों, दृश्यों, यात्राओं एवं जीवन के अन्य कार्य-कलापों का विवरण जिन निबन्धों में दिया जाता है, उन्हें विवरणात्मक निबन्ध कहते हैं। इनमें आख्यानात्मकता का पुट रहता है तथा विषय-वस्तु के प्रत्येक ब्यौरे का सुसम्बद्ध विवरण रोचक, हृदयग्राही और क्रमबद्ध रूप में प्रस्तुत किया जाता है। इनकी शैली सरल, आकर्षक, भावानुकूल, व्यावहारिक एवं चित्रात्मक होती है। प्रस्तुत संकलन में श्रीराम शर्मा का 'स्मृति' तथा काका कालेलकर का 'निष्ठामूर्ति कस्तूरबा' इसी प्रकार के निबन्ध हैं।

भारतेन्दु-युग के निबन्धकारों में भारतेन्दु हरिश्चन्द्र, बालकृष्ण भट्ट, बदरीनारायण चौधरी 'प्रेमघन', लाला श्रीनिवास दास, केशवराम भट्ट, अम्बिकादत्त व्यास, प्रतापनारायण मिश्र, राधाचरण गोस्वामी, बाबू बालमुकुन्द गुप्त आदि की गणना प्रमुख रूप

से की जाती है। द्विवेदी-युग के उल्लेखनीय निबन्धकारों के नाम इस प्रकार हैं–आचार्य महावीरप्रसाद द्विवेदी, बालमुकुन्द गुप्त, माधवप्रसाद मिश्र, सरदार पूर्णसिंह, मिश्रबन्धु, गोपालराम गहमरी, चन्द्रधरशर्मा गुलेरी, श्यामसुन्दर दास, रामदास गौड़, गौरीशंकर हीराचन्द ओझा, अयोध्यासिंह उपाध्याय 'हरिऔध', रामचन्द्र शुक्ल, डॉ0 पीताम्बरदत्त बड़थ्वाल, पद्मसिंह शर्मा आदि। बाबू बालमुकुन्द गुप्त भारतेन्दु-युग और द्विवेदी-युग के मध्य की कड़ी थे।

कहानी–'कहानी' वह साहित्यिक गद्य-विधा है, जिसमें जीवन के किसी एक पक्ष का कल्पनामिश्रित, मार्मिक एवं रोचक चित्रण होता है। कहानी आधुनिक साहित्य की सबसे लोकप्रिय विधा है, क्योंकि आधुनिक कहानी रोचकता, कलात्मकता, संवेदनशीलता, संक्षिप्तता, प्रभावोत्पादकता, भावात्मकता आदि गुणों को समेटे हुए है। मानव-सृष्टि के विकास के साथ ही कहानी का विकास भी हुआ है। कहानी कहना-सुनना मनुष्य की आदिम प्रवृत्तियों में से एक है। आरम्भ में मनोरंजन और आत्म-परितोष के लिए कहानी कही-सुनी जाती थी। यद्यपि कहानी का प्रधान लक्ष्य मनोरंजन होता है, किन्तु उसमें जीवन का सन्देश-पूर्वजों के अनुभव आदि भी निहित होते हैं।

आज की कहानी जीवन के बहुत निकट आ गयी है। वह जीवन में यथार्थ की प्रतिच्छाया है। वह आज अभिव्यक्ति का सर्वाधिक सशक्त माध्यम बन गयी है। आज की कहानी मानव-जीवन के किसी एक पक्ष अथवा घटना का सूक्ष्मता के साथ चित्रण करती है। हिन्दी की प्रथम आधुनिक कहानी कौन है, इस पर विवाद है। लेकिन अधिकांश समीक्षकों ने किशोरीलाल गोस्वामी की 'इन्दुमती' को पहली कहानी माना है। विषय-वस्तु के आधार पर हिन्दी की कहानियों का विभाजन इस प्रकार किया जा सकता है–ऐतिहासिक, सामाजिक, यथार्थवादी, दार्शनिक, प्रतीकवादी, मनोवैज्ञानिक, हास्य-व्यंग्यप्रधान आदि। कहानी-लेखन में प्रायः कथात्मक, पत्रात्मक, आत्मचरित्रप्रधान, डायरी, नाटकीय, मिश्रित आदि शैलियों का प्रयोग होता है। इस संकलन में प्रेमचन्द जी की कहानी 'मन्त्र' कहानीकार की शैलीगत विशिष्टताओं का परिचय कराती है।

भारतेन्दु-युग के कहानीकारों में अम्बिकादत्त व्यास, चण्डीप्रसाद सिंह आदि हैं तथा द्विवेदी-युग के प्रमुख कहानीकारों में किशोरीलाल गोस्वामी, गिरिजाकुमार घोष, गोपालराम गहमरी, विश्वम्भरनाथ शर्मा 'कौशिक', जयशंकर प्रसाद, प्रेमचन्द, चन्द्रधरशर्मा 'गुलेरी' और आचार्य रामचन्द्र शुक्ल के नाम उल्लेखनीय हैं।

नाटक–रंगमंच पर अभिनय द्वारा प्रस्तुत करने की दृष्टि से लिखी गयी तथा पात्रों एवं संवादों पर आधारित एक से अधिक अंकों वाली दृश्यात्मक साहित्यिक रचना को नाटक कहते हैं। नाटक वस्तुतः रूपक का एक भेद है। रूप का आरोप होने के कारण नाटक को रूपक कहा गया है। अभिनय के समय नट पर दुष्यन्त या राम-जैसे ऐतिहासिक पात्र का आरोप किया जाता है। नट (अभिनेता) से सम्बद्ध होने के कारण इसे नाटक कहते हैं। नाटक में ऐतिहासिक पात्र-विशेष की शारीरिक एवं मानसिक अवस्था का अनुकरण किया जाता है। आज नाटक शब्द अंग्रेजी 'ड्रामा' या 'प्ले' का पर्याय बन गया है। हिन्दी में मौलिक नाटकों का आरम्भ भारतेन्दु हरिश्चन्द्र से माना जाता है। द्विवेदी-युग में इसका अधिक विकास नहीं हुआ। छायावाद-युग में जयशंकर प्रसाद ने ऐतिहासिक नाटकों के विकास में महत्त्वपूर्ण योग दिया। छायावादोत्तर-युग में लक्ष्मीनारायण मिश्र, उदयशंकर भट्ट, उपेन्द्रनाथ 'अश्क', सेठ गोविन्ददास, डॉ0 रामकुमार वर्मा, जगदीशचन्द्र माथुर, मोहन राकेश आदि ने इस विधा को विकसित किया है। नाटकों का एक महत्त्वपूर्ण रूप **एकांकी** है। 'एकांकी' किसी एक महत्त्वपूर्ण घटना, परिस्थिति या समस्या को आधार बनाकर लिखा जाता है और उसकी समाप्ति एक ही अंक में उस घटना के चरम क्षणों को मूर्त करते हुए कर दी जाती है। हिन्दी में एकांकी नाटकों का विकास छायावाद-युग से माना जाता है। सामान्यतः श्रेष्ठ नाटककारों ने ही श्रेष्ठ एकांकियों की भी रचना की है।

आलोचना–'आलोचना' का शाब्दिक अर्थ है 'किसी वस्तु को भली प्रकार देखना'। किसी वस्तु को अच्छी तरह से देखने पर उसके गुण-दोष प्रकट हो जाते हैं, इसलिए किसी कृति का अध्ययन करके जब उसके गुण-दोषों को प्रकट किया जाता है तो उसे 'आलोचना' कहते हैं। इसके लिए 'समीक्षा' शब्द का प्रयोग भी किया जाता है। हिन्दी में आधुनिक आलोचना का प्रारम्भ 'भारतेन्दु युग' से माना जाता है।

उपन्यास—'उपन्यास' शब्द संस्कृत के 'उपन्यस्त' से बना है, जिसका अर्थ 'सामने रखना' है। इस प्रकार मानव-जीवन, समाज या इतिहास के यथार्थ सत्य को संवाद एवं दृश्यात्मक घटनाक्रमों पर आधारित चित्रण के माध्यम से पाठकों के सामने रखने अथवा प्रस्तुत करनेवाली विधा ही उपन्यास कहलाती है। विषय के आधार पर हिन्दी उपन्यासों के सामाजिक, ऐतिहासिक, आंचलिक, मनोवैज्ञानिक, पौराणिक, राजनीतिक, रहस्यात्मक आदि भेद किये जा सकते हैं। लाला श्रीनिवासदास का 'परीक्षा गुरु' ही हिन्दी की सर्वप्रथम औपन्यासिक कृति है और उनके अतिरिक्त भारतेन्दु-युग के अन्य कई लेखकों ने भी उपन्यास-लेखन की ओर ध्यान दिया, जिनमें रत्नचन्द प्लीडर का 'नूतन चरित्र', बालकृष्ण भट्ट का 'नूतन ब्रह्मचारी' और 'सौ अजान एक सुजान', राधाकृष्णदास का 'निस्सहाय हिन्दू', राधाचरण गोस्वामी का 'विधवा विपत्ति', कार्तिकप्रसाद खत्री का 'जया', बालमुकुन्द गुप्त का 'कामिनी' आदि उल्लेखनीय हैं।

प्रेमचन्द जी हिन्दी-उपन्यास-साहित्य के महत्त्वपूर्ण स्तम्भ माने जाते हैं। 'सेवासदन' उनका सर्वप्रथम उपन्यास है, इसमें नागरिक जीवन और समाज के मध्यवर्ग की सामाजिक समस्याओं का अत्यन्त चित्ताकर्षक वर्णन किया गया है। आपके अन्य प्रमुख उपन्यास हैं–प्रेमाश्रम, रंगभूमि, कायाकल्प, गोदान आदि। प्रेमचन्द जी के समसामयिक उपन्यासकारों में जयशंकर प्रसाद, विश्वम्भरनाथ शर्मा 'कौशिक', चतुरसेन शास्त्री, वृन्दावनलाल वर्मा, पाण्डेय बेचनशर्मा 'उग्र', रामवृक्ष बेनीपुरी, जैनेन्द्र कुमार, इलाचन्द्र जोशी, भगवतीचरण वर्मा, सूर्यकान्त त्रिपाठी 'निराला', यशपाल आदि की गणना की जाती है। इसके अतिरिक्त बहुत-से लोगों ने उपन्यास पर अपनी लेखनी चलायी है।

जीवनी—किसी व्यक्ति-विशेष के जीवन की, जन्म से मृत्यु तक की घटनाओं के क्रमबद्ध विवरण को 'जीवनी' कहा जाता है। अंग्रेजी में इसे लाइफ अथवा बायोग्राफी कहते हैं। हिन्दी में जीवनी को जीवन-चरित्र भी कहा जाता है। 'जीवन' शब्द जहाँ व्यक्ति के जीवन की बाह्य घटनाओं को प्रकट करता है, वहाँ चरित्र उसकी आन्तरिक विशेषताओं को प्रकाशित करता है। इस प्रकार जीवनी में किसी व्यक्ति-विशेष के बाह्य एवं आन्तरिक जीवन का प्रकाशन किया जा सकता है। जीवनी का प्रामाणिक होना आवश्यक है। हिन्दी साहित्य में 'भक्तमाल', 'चौरासी वैष्णवन की वार्त्ता' तथा 'दो सौ बावन वैष्णवन की वार्त्ता' को जीवनी के क्षेत्र में प्रयास मात्र कहा जा सकता है।

हिन्दी में जीवनी लिखने की परम्परा का उद्‌भव भारतेन्दु-युग में सन् 1881 ई० के आस-पास हुआ। इसी वर्ष गोपालशर्मा शास्त्री ने उस युग की महान् विभूति स्वामी दयानन्द सरस्वती पर हिन्दी की पहली जीवनी 'दयानन्द दिग्विजय' लिखी। इसके पश्चात् ही हिन्दी साहित्य में जीवनी लिखने का क्रम चल पड़ा। **भारतेन्दु-युग** के प्रमुख जीवनी-लेखकों में कार्तिकप्रसाद खत्री ने मीराबाई, विक्रमादित्य, शिवाजी, अहिल्याबाई की जीवनियाँ लिखीं। भारतेन्दु हरिश्चन्द्र ने 'चरितावली' लिखी। राधाकृष्णदास ने भारतेन्दु का जीवन-चरित्र लिखा और मुंशी देवीप्रसाद ने महाराज मानसिंह कछवाहा, अकबर, बीरबल, उदयसिंह की जीवनियाँ लिखीं। द्विवेदी-युग के जीवनी लेखकों में डॉ० सम्पूर्णानन्द ने सम्राट् अशोक, हर्षवर्द्धन, महाराज छत्रसाल, चेतसिंह और महात्मा गाँधी की जीवनियाँ लिखीं। महादेव भट्ट ने लाला लाजपत राय, अरविन्द; रामचन्द्र वर्मा ने महात्मा गाँधी; स्वामी सत्यानन्द ने दयानन्द; डॉ० राजेन्द्र प्रसाद ने गाँधीजी (चम्पारन में गाँधी) की जीवनियाँ लिखीं।

आत्मकथा—जिस गद्य साहित्य में लेखक अपने जीवन की स्मरणीय घटनाओं का क्रमबद्ध वर्णन एवं विश्लेषण करता है, उस गद्य साहित्य को ही 'आत्मकथा' कहते हैं। जीवन के आत्मकथा और परकथा दो भेद किये जा सकते हैं। आत्मकथा में व्यक्ति अपने जीवन के सम्बन्ध में लिखता है, जबकि परकथा में दूसरे के सम्बन्ध में। आत्मकथा में तटस्थ एवं निर्दोष दृष्टि का होना आवश्यक है। व्यक्ति अपने सम्बन्ध में लिखते समय तटस्थ नहीं रह पाता। जब वह अपनी कमजोरियों का वर्णन करता है, उसकी कलम लड़खड़ा जाती है। हिन्दी में सर्वप्रथम भक्तिकाल में बनारसीलाल जैन ने 'अर्द्धकथा' लिखी। इस आत्मकथा में अकबर के समय की परिस्थितियों का यथार्थ चित्रण हुआ है। इसमें आत्मकथा के तटस्थता, निरपेक्षता आदि गुण मिलते हैं। सन् 1860 ई० में स्वामी दयानन्द सरस्वती ने अपनी अधूरी आत्मकथा लिखी। आत्मकथा का जन्म और विकास भी गद्य की अन्य विधाओं की तरह भारतेन्दु-युग से ही होता है।

भारतेन्दु-युग के अन्तर्गत सत्यानन्द अग्निहोत्री की 'मुझमें देव जीवन का विकास', अम्बिकादत्त व्यास की 'निज वृत्तान्त' और भारतेन्दु जी की 'कुछ आप बीती कुछ जग बीती' सामने आती है। द्विवेदी-युग में परमानन्द कृत 'आप बीती', स्वामी श्रद्धानन्द कृत 'कल्याण मार्ग का पथिक', रामविलास शुक्ल कृत 'मैं क्रान्तिकारी कैसे बना' आदि आत्मकथाएँ लिखी गयीं। द्विवेदी जी ने स्वयं अपनी आत्मकथा लिखी है। द्विवेदी-युग के बाद भी उत्कृष्ट आत्मकथाएँ लिखी गयीं जिनमें डॉ0 राजेन्द्र प्रसाद की 'आत्मकथा', बच्चन की 'नीड़ का निर्माण फिर', वियोगी हरि की 'मेरा जीवन प्रवाह', वृन्दावनलाल वर्मा की 'अपनी कहानी', उग्र की 'अपनी खबर' आदि आत्मकथाएँ प्रसिद्ध हैं।

रेखाचित्र—रेखाचित्र जैसा कि नाम से ही स्पष्ट है, किसी घटना अथवा स्थान का ऐसा वर्णन किया जाय कि पाठक के मन-मस्तिष्क पर एक रेखा-सी खिंच जाय, उसका चित्र उपस्थित हो जाय। रेखाचित्र शब्द अंग्रेजी के 'स्केच' शब्द का अनुवाद है तथा दो शब्दों रेखा और चित्र के योग से बना है। रेखाचित्र में चित्रकला तथा साहित्य का सुन्दर सामंजस्य दिखायी पड़ता है। जिस प्रकार चित्रकार तूलिका तथा रंगों के माध्यम से किसी सजीव चित्र का निर्माण करता है, उसी प्रकार रेखाचित्रकार शब्दों के द्वारा ऐसा भावपूर्ण चित्र प्रस्तुत करता है जो उसकी वास्तविक संवेदना को मूर्त रूप प्रदान करने में सफल होता है। किसी जीव, वस्तु या पदार्थ को हम सामने देखने लगते हैं। इसमें रेखाएँ सजीव होकर अभिप्रेत-भाव को मुखर बना देती हैं। रेखाचित्र अपनी इन्हीं विशेषताओं के साथ साहित्य में अवतरित हुआ। साहित्यिक विधा हो जाने पर भी चित्रकला की विशेषताएँ उसमें यथावत् बनी रहीं। रेखाचित्र का साहित्यिक विधा में चित्र में उद्घाटन, रेखाओं के स्थान पर शब्दों द्वारा किया जाने लगा। शब्दों में जीव, पदार्थ या वस्तु के चित्र बनाये जाने लगे। रेखाचित्र हमारे सामने अनुभव में आये किसी चरित्र की विशेषताओं का मार्मिक रूप उपस्थित करता है।

हिन्दी में रेखाचित्र का सूत्रपात सन् 1929 ई0 में प्रकाशित पं0 पद्मसिंह शर्मा के 'पद्म-प्रबन्ध' निबन्धों से होता है। इन निबन्धों को यद्यपि आधुनिक रेखाचित्र नहीं कहा जा सकता, परन्तु इनमें वर्तमान रेखाचित्रों के पर्याप्त तत्त्व हैं और ये रेखाचित्रों की पृष्ठभूमि का कार्य करते हैं। सन् 1936-37 ई0 से हिन्दी रेखाचित्र में विकास की रेखाएँ क्रमिक रूप से मिलने लगती हैं। पं0 श्रीराम शर्मा का रेखाचित्रों का एक संग्रह 'बोलती प्रतिमा' के नाम से प्रकाशित हुआ। निराला, महादेवी वर्मा, पदुमलाल पुन्नालाल बख्शी, रामवृक्ष बेनीपुरी, प्रकाशचन्द्र गुप्त, बनारसीदास चतुर्वेदी, डॉ0 विनयमोहन शर्मा, देवेन्द्र सत्यार्थी आदि ने रेखाचित्रों का सृजन किया है। प्रस्तुत संकलन में महादेवी वर्मा का 'गिल्लू' इस विधा की ही रचना है। इधर के चन्द्रमौलि बख्शी का 'संन्यासी बाबा', प्रकाशकुमार का 'सीता दीदी', रामप्रकाश कपूर का 'अंजो दीदी' आदि रेखाचित्र महत्त्वपूर्ण हैं।

संस्मरण—संस्मरण गद्य की वह विधा है, जिसमें लेखक स्वयं अपनी अनुभूतियाँ स्मरण के आधार पर अंकित करता है। इसमें प्रायः किसी महापुरुष के साथ रहने की घटनाओं का यथावत्, प्रामाणिक, किन्तु सरस-सटीक वर्णन होता है। जब किसी यात्रा का वर्णन होता है तो उसे यात्रा-संस्मरण कहा जाता है। किसी घटना, स्थल या व्यक्ति से सम्बन्धित अनुभूति लेखक के हृदय-पटल पर छाकर उसके मन को भीतर-ही-भीतर कुरेदती रहती है। यह अभिव्यक्ति के रूप में आकर संस्मरण बन जाती है।

संस्मरण-साहित्य के क्षेत्र में सबसे पहले आचार्य चतुरसेन शास्त्री के संस्मरण हमारे सामने आते हैं। 'पहली सलामी' संस्मरण में शास्त्री जी ने एसेम्बली में भगतसिंह द्वारा बम फेंकने का आँखों-देखा वर्णन किया है। हिन्दी के प्रमुख संस्मरण लेखकों में रामवृक्ष बेनीपुरी, महादेवी वर्मा, कन्हैयालाल मिश्र 'प्रभाकर', बनारसीदास चतुर्वेदी आदि हैं। स्वतन्त्रता के पश्चात् पत्र-पत्रिकाओं में बहुत-से संस्मरण प्रकाशित हुए, जिनमें भगवतीप्रसाद वाजपेयी का 'महाप्राण निराला', विनयमोहन शर्मा का 'लक्ष्मीधर वाजपेयी', देवेन्द्र सत्यार्थी का 'बलराज साहनी' आदि संस्मरण उल्लेखनीय हैं।

रिपोर्ताज—जिस गद्य-विधा में किसी घटना या आयोजन का आँखों-देखा विवरण प्रभावशाली एवं कलात्मक ढंग से होता है, उसे रिपोर्ताज कहते हैं। युग-चेतना, युग-संघर्ष और जीवन की साधारणता को कला में स्थापित करने की प्रवृत्ति से ही इसे साहित्यिकता प्राप्त होती है। घटनाओं की तत्कालीन मार्मिक प्रतिक्रिया ही आकर्षक शैली का परिधान ग्रहण कर 'रिपोर्ताज' बनती

है। इससे घटनाओं का सहज मनोवैज्ञानिक विश्लेषण होता है। लेखक अपनी अनुभूतियों को अत्यन्त निखरे रूप में प्रस्तुत कर दूसरों को प्रभावित करने की क्षमता रखता है।

रिपोर्ताज हिन्दी की सर्वथा नवीन विधा है। फ्रांसीसी शब्द रिपोर्ताज अंग्रेजी के रिपोर्ट के निकट है। हिन्दी में इसे वृत्त-निर्देशन या सूचनिका कहते हैं। रिपोर्ताज में तथ्यों में कलात्मकता और साहित्यिकता का आवरण प्रदान किया जाता है। शिवदानसिंह चौहान ने 'मौत के खिलाफ जिन्दगी की लड़ाई' रिपोर्ताज में राष्ट्र की स्वतन्त्रता से पूर्व का जीवन्त परिवेश चित्र प्रस्तुत किया है। रांगेय राघव ने 'अदम्य जीवन' शीर्षक से 'विशाल भारत' के लिए रिपोर्ताज लिखा। तूफानों के बीच आपका 'बंगाल का अकाल' (सन् 1943-44) रिपोर्ताजों का ही संग्रह है। अन्य रिपोर्ताज लेखकों में प्रकाशचन्द्र गुप्त, भगवतशरण उपाध्याय, अमृतलाल नागर, उपेन्द्रनाथ 'अश्क', प्रभाकर माचवे, लक्ष्मीचन्द जैन, डॉ0 धर्मवीर भारती, डॉ0 विष्णुकान्त शास्त्री आदि हैं।

यात्रा-साहित्य—वह रचना जिसमें लेखक किसी स्थान-विशेष की यात्रा के अनुभव का यथार्थ एवं कलात्मक वर्णन करता है, उसे यात्रा-साहित्य कहते हैं। मनुष्य ने भ्रमण और पर्यटन के सुन्दर अनुभवों और उल्लासपूर्ण क्षणों को शब्दों में उतारने का प्रयास किया। इस प्रवृत्ति से यात्रा-साहित्य का विकास हुआ। हिन्दी साहित्य में यह नवीन विधा पाश्चात्य साहित्य के सम्पर्क से आयी। इस विधा से पाठक किसी सुदूर स्थल के बारे में पूरी जानकारी घर बैठे कर लेता है। उस स्थान के रहन-सहन, खान-पान, वहाँ के निवासियों का आचार-विचार, प्राकृतिक और सौन्दर्यपरक जीवन का परिचय मिल जाता है। पाश्चात्य साहित्य में कुछ उत्कृष्ट यात्रा-विवरण लिखे गये जिनसे प्रभावित होकर कहा गया है कि उनमें एक साथ महाकाव्य और उपन्यास का विराट् तत्त्व, कहानी का आकर्षण, गीतिकाव्य की मोहक भावशीलता, संस्मरणों की आत्मीयता और निबन्धों की मुक्ति दिखायी पड़ती है।

यात्रा-साहित्य में प्राकृतिक दृष्टि, दार्शनिक दृष्टि और मनोरंजनमूलक दृष्टि इन तीन बातों का रहना अनिवार्य है। यात्रा-साहित्य की अधिकतर रचना गद्य में हुई है। कहीं-कहीं गद्य-पद्य मिश्रित शैली भी मिल जाती है। शैली की दृष्टि से यात्रा-साहित्य के ये भेद किये जा सकते हैं—विवरणात्मक, संस्मरणात्मक, विचारात्मक, आत्मपरक यात्रा-साहित्य। महादेवी वर्मा द्वारा लिखित 'लन्दन यात्रा' यात्रा-साहित्य का प्रथम ग्रन्थ है। भारतेन्दु-युग में भारतेन्दु हरिश्चन्द्र, बालकृष्ण भट्ट, प्रतापनारायण मिश्र आदि ने यात्रा-वृत्तान्त लिखे। द्विवेदी-युग के उल्लेखनीय यात्रा-साहित्य ठाकुर गदाधरसिंह द्वारा लिखित 'भारत भ्रमण', शिवप्रसाद गुप्त द्वारा लिखित 'पृथ्वी-प्रदक्षिणा', स्वामी सत्यदेव परिव्राजक द्वारा लिखित 'मेरी जर्मन-यात्रा', 'यूरोप की सुखद स्मृतियाँ', 'अमरीका प्रवास की मेरी अद्भुत कहानी', 'मेरी कैलास-यात्रा', राहुल साँकृत्यायन द्वारा लिखित 'मेरी यूरोप-यात्रा', 'मेरी तिब्बत-यात्रा' आदि हैं। इस संकलन में **शिकार साहित्य** से भी सम्बन्धित **'स्मृति'** पाठ श्रीराम शर्मा का दिया गया है।

गद्य-काव्य—छन्दविहीन होते हुए भी कविता के समान आनन्द प्रदान करनेवाली गद्य-रचना को गद्य-काव्य कहा जाता है अर्थात् गद्य-काव्य वह रचना है, जिसमें कविता-जैसी संवेदनशीलता और रसात्मकता होती है। फलस्वरूप उसका बाह्य रूप भी साधारण पद्य की अपेक्षा अधिक अलंकृत और सधा हुआ होता है। गद्य-काव्य गद्य और काव्य के बीच की विधा है। इसमें विचारों की अभिव्यक्ति की अपेक्षा भावों की सरस अभिव्यक्ति की ओर लेखक का अधिक ध्यान रहता है। गद्य-काव्य में भावात्मक निबन्धों की अपेक्षा वैयक्तिकता और एकतथ्यता अधिक होती है। इसमें एक ही केन्द्रीय भावना की प्रधानता होने के कारण भावात्मक निबन्ध की अपेक्षा इसका आकार भी छोटा होता है।

हिन्दी गद्य-काव्य का प्रारम्भ छायावाद-युग और विकास छायावादोत्तर-युग में हुआ। रवीन्द्रनाथ ठाकुर ने गीताञ्जलि की रचना अंग्रेजी गद्य में की थी। इसका अनुवाद हिन्दी गद्य में प्रकाशित हुआ। अतः हिन्दी गद्य-काव्य 'गीताञ्जलि' की ही देन माना जा सकता है। गीताञ्जलि से प्रभावित होकर सन् 1916 ई0 में राय कृष्णदास ने 'साधना' की रचना की। 'साधना' को ही हिन्दी गद्य-काव्य की प्रथम रचना होने का गौरव प्राप्त है। अन्य गद्य-काव्य लेखकों में वियोगी हरि, चतुरसेन शास्त्री, वृन्दावनलाल वर्मा, डॉ0 रामकुमार वर्मा, दिनेश नन्दिनी डालमिया, राजनारायण मेहरोत्रा, राजेन्द्र सिंह आदि का नाम लिया जा सकता है।

●●●

सत्य कथन की पहचान

निम्नलिखित कथनों में से कोई एक कथन सही है, उसे पहचान कर लिखिए–

1. (क) पद्य में यथार्थ, वस्तुपरक और तथ्यात्मक वर्णन पाया जाता है,
(ख) हिन्दी साहित्य की सर्वाधिक महत्त्वपूर्ण घटना पद्य का आविष्कार है,
(ग) गद्य ज्ञान-वृद्धि का एक सफल साधन है,
(घ) पद्य की भाषा गद्य की अपेक्षा अधिक स्पष्ट और व्यवस्थित होती है।

2. (क) खड़ीबोली का विकास ब्रजभाषा एवं राजस्थानी गद्य से हुआ,
(ख) गद्य में स्वतन्त्र कल्पना की उड़ान होती है,
(ग) पद्य में व्याकरण के नियमों की अवहेलना नहीं की जा सकती है,
(घ) गद्य में वर्णन सूक्ष्म एवं संकेतात्मक होता है।

3. (क) 'चन्द छन्द बरनन की महिमा' के रचनाकार तुलसीदास हैं,
(ख) 'सुखसागर' के रचनाकार मुंशी सदासुखलाल हैं,
(ग) 'चौरासी वैष्णवन की वार्त्ता' के रचनाकार गोस्वामी विट्ठलनाथ हैं,
(घ) 'शृंगार रस-मण्डन' गोकुलनाथ की रचना है।

4. (क) 'नासिकेतोपाख्यान' की भाषा में पश्चिमीपन अधिक है,
(ख) 'ब्रह्म समाज' के प्रवर्तक राजा शिवप्रसाद सितारेहिन्द थे,
(ग) लल्लूलाल की रचना 'रानी केतकी की कहानी' हास्य प्रधान है,
(घ) स्वामी दयानन्द ने 'सत्यार्थ प्रकाश' की रचना हिन्दी में की थी।

5. (क) सदल मिश्र ने हिन्दी को आर्यभाषा के रूप में घोषित किया,
(ख) भारतेन्दु के पूर्व हिन्दी गद्य का स्वरूप निश्चित नहीं था,
(ग) 'उदन्त मार्तण्ड' 30 मई, सन् 1826 ई0 में दिल्ली में प्रकाशित हुआ था,
(घ) सर सैयद अहमद खाँ ने 'बंगदूत' पत्र द्वारा हिन्दी का समर्थन किया था।

6. (क) 'सरस्वती' पत्रिका के प्रथम सम्पादक रामचन्द्र शुक्ल थे,
(ख) महावीरप्रसाद द्विवेदी धर्मयुग के सम्पादक रहे,
(ग) इण्डियन प्रेस, प्रयाग से सन् 1903 ई0 में 'इन्दु' पत्रिका का प्रकाशन प्रारम्भ हुआ,
(घ) 'सरस्वती' पत्रिका का प्रकाशन हिन्दी साहित्य की महत्त्वपूर्ण घटना है।

7. (क) द्विवेदी युग का समय 1800-1822 ई0 तक है,
(ख) हिन्दी खड़ीबोली का आविर्भाव 19वीं शताब्दी के जागरणकाल में हुआ,
(ग) 'रानी केतकी की कहानी' हिन्दी की प्रथम कहानी है,
(घ) भारतेन्दु की रचनाएँ 'मानसरोवर' में प्रकाशित हुई हैं।

8. (क) द्विवेदी युग में प्रायः जासूसी उपन्यास लिखे गये,
(ख) 'भाषा रहस्य' विनयमोहन शर्मा का निबन्ध है,
(ग) 'हंस' पत्रिका के संस्थापक मुंशी प्रेमचन्द हैं,
(घ) 'अशोक के फूल' वियोगी हरि का नाटक है।

9. (क) राउलवेल मैथिली-हिन्दी में रचित गद्य की पुस्तक है,
(ख) 'वर्णरत्नाकर' रोडा की तीसरी रचना है,
(ग) छायावादोत्तर-युग का कालक्रम सन् 1919 ई0 से 1938 ई0 तक है,
(घ) 'राउलवेल' एक शिलांकित कृति है जिसके रचयिता रोडा हैं।

10. (क) माखनलाल चतुर्वेदी भारतेन्दु युग के श्रेष्ठ निबन्धकार थे,
(ख) महावीरप्रसाद द्विवेदी सन् 1903 से 17 वर्षों तक 'सरस्वती' के सम्पादक रहे,
(ग) आचार्य चतुरसेन शास्त्री 'नागरी प्रचारिणी पत्रिका' के प्रथम सम्पादक थे,
(घ) प्रतापनारायण मिश्र ने 'हिन्दी प्रदीप' पत्रिका का सम्पादन किया।

11. (क) किशोरीलाल गोस्वामी कृत 'इन्दुमती' हिन्दी की पहली कहानी है,
(ख) हिन्दी की प्रथम कहानी इंशा अल्ला कृत 'रानी केतकी की कहानी' है,
(ग) बाबू बालमुकुन्द गुप्त भारतेन्दु युग के श्रेष्ठ उपन्यासकार थे,
(घ) 'एकलव्य' डॉ0 रामकुमार वर्मा का श्रेष्ठ उपन्यास है।

12. (क) भारतेन्दु युग का कालक्रम 13वीं शताब्दी से 1868 ई0 तक है,
(ख) द्विवेदी युग का कालक्रम सन् 1900 ई0 से 1922 ई0 तक है,
(ग) शुक्लोत्तर युग का कालक्रम सन् 1919 ई0 से 1938 ई0 तक है,
(घ) स्वातन्त्र्योत्तर-युग का कालक्रम सन् 1938 ई0 से 1947 ई0 तक है।

13. (क) महादेवी वर्मा का 'गिल्लू' रेखाचित्र विधा की रचना है,
(ख) रेखाचित्र विधा की रचना 'अंजो दीदी' के लेखक चन्द्रमौलि बख्शी हैं,
(ग) श्रीराम शर्मा का एक संग्रह 'बोलती प्रतिमा' रिपोर्ताज विधा का है,
(घ) 'मौत के खिलाफ जिन्दगी की लड़ाई' शिवदानसिंह चौहान का रेखाचित्र संग्रह है।

14. (क) हिन्दी में एकांकी नाटकों का विकास भारतेन्दु युग में हुआ,
(ख) आधुनिक आलोचना का प्रारम्भ द्विवेदी युग से माना जाता है,
(ग) 'स्कन्दगुप्त' जयशंकर प्रसाद का प्रभावशाली ऐतिहासिक नाटक है,
(घ) बनारसीलाल जैन कृत 'अर्द्धकथा' में औरंगजेब काल की परिस्थितियों का चित्रण है।

15. (क) 'नीड़ का निर्माण फिर' वियोगी हरि की आत्मकथा है,
(ख) शिवप्रसाद गुप्त लिखित 'पृथ्वी-प्रदक्षिणा' रिपोर्ताज है,
(ग) 'मेरी तिब्बत यात्रा' राहुल सांकृत्यायन कृत यात्रा-साहित्य है,
(घ) रांगेय राघव कृत 'अदम्य जीवन' यात्रा-साहित्य है।

16. (क) 'निस्सहाय हिन्दू' राधाकृष्णदास का उपन्यास है,
(ख) मुंशी प्रेमचन्द का सामाजिक उपन्यास 'कंकाल' है,
(ग) 'सौ अजान एक सुजान' बालमुकुन्द गुप्त का उपन्यास है,
(घ) भूपेन्द्र अबोध के उपन्यास 'तितली' का प्रकाशन पटना में हुआ था।

17. (क) एकांकियों के विकास का श्रेष्ठ काल भारतेन्दु-युग रहा है,
(ख) द्विवेदी-युग में नाटकों का सर्वाधिक विकास हुआ,
(ग) मोहन राकेश भारतेन्दु-युग के श्रेष्ठ एकांकीकार थे,
(घ) श्रेष्ठ नाटककारों ने ही श्रेष्ठ एकांकियों की रचना की है।

18. (क) नन्ददुलारे वाजपेयी भारतेन्दु-युग के निबन्धकार हैं,
(ख) राहुल सांकृत्यायन द्विवेदी-युग के गद्यकार हैं,
(ग) भगवतीप्रसाद वाजपेयी छायावादोत्तर-काल के निबन्धकार हैं,
(घ) पूर्णसिंह द्विवेदी-युग के उपन्यासकार हैं।

19. (क) हिन्दी गद्य-काव्य का विकास शुक्ल-युग में हुआ,
(ख) डॉ0 विष्णुकान्त शास्त्री श्रेष्ठ गद्य-काव्य लेखक हैं,
(ग) गद्य-काव्य मुख्यतः भावात्मक निबन्ध हैं,
(घ) गद्य और पद्य के बीच की विधा गद्य-काव्य है।

20. (क) महादेवी वर्मा लिखित 'लन्दन यात्रा' रिपोर्ताज का प्रथम ग्रन्थ है,
(ख) रिपोर्ताज हिन्दी की सर्वथा नवीन विधा है,
(ग) वैयक्तिकता और एकतथ्यता रिपोर्ताज में अधिक होती है,
(घ) वृन्दावनलाल वर्मा मूलतः रिपोर्ताज लेखक हैं।

●●●

हिन्दी गद्य का विकास एवं विधाओं पर आधारित प्रश्न

1. 'रानी केतकी की कहानी' के लेखक का नाम लिखिए।
2. हिन्दी के प्रथम मौलिक उपन्यास का नाम लिखिए।
3. भारतेन्दु-युग के दो निबन्धकारों के नाम लिखिए।
4. द्विवेदी-युग के दो निबन्धकारों के नाम लिखिए।
5. भारतेन्दु-युग के तीन नाटकों के नाम लिखिए।
6. संकलन-त्रय का क्या अर्थ है?
7. आत्मकथा से क्या आशय है?
8. जीवनी का अर्थ लिखिए।
9. हिन्दी के प्रमुख तीन जीवनी-लेखकों के नाम लिखिए।
10. जीवनी और आत्मकथा में अन्तर बताइये।
11. संस्मरण किसे कहते हैं?
12. हिन्दी के दो संस्मरण-लेखकों के नाम लिखिए।
13. रेखाचित्र तथा संस्मरण में अन्तर स्पष्ट कीजिए।
14. हिन्दी के प्रमुख रेखाचित्रकारों के नाम लिखिए।
15. यात्रावृत्त किसे कहते हैं?
16. यात्रावृत्त की प्रमुख विशेषताएँ लिखिए।
17. रिपोर्ताज से आप क्या समझते हैं?
18. चार रिपोर्ताज-लेखकों के नाम लिखिए।
19. गद्य-काव्य से क्या तात्पर्य है?
20. गद्य-काव्य के किन्हीं दो लेखकों के नाम लिखिए।
21. प्रेमचन्द के उपन्यासों के नाम लिखिए।
22. प्रेमचन्द के उपन्यास किन विषयों पर आधारित हैं?
23. हिन्दी के सर्वप्रथम यात्रा वृत्त-लेखक एवं उनकी रचना का नाम लिखिए।
24. पाश्चात्य दृष्टि से नाटक के तत्त्व लिखिए।
25. जयशंकर प्रसाद के नाटकों के नाम लिखिए।
26. आधुनिक साहित्य की सबसे अधिक लोकप्रिय विधा का नाम लिखिए।
27. अच्छी जीवनी की प्रमुख विशेषताएँ लिखिए।
28. द्विवेदी-युग के दो समीक्षकों के नाम लिखिए।
29. विषय एवं शैली की दृष्टि से निबन्ध के भेद लिखिए।
30. अध्यापक पूर्णसिंह किस युग के निबन्धकार हैं?
31. भारतेन्दु-युग नाम कैसे पड़ा?

32. द्विवेदी-युग नाम कैसे पड़ा?
33. नाटक के तत्त्वों के नाम लिखिए।
34. हिन्दी में रेखाचित्र का सूत्रपात कब हुआ?
35. भारतेन्दु-युग के दो जीवनी-लेखकों के नाम लिखिए।
36. द्विवेदी-युग के दो जीवनी-लेखकों का नामोल्लेख करते हुए उनकी एक-एक कृति का नाम लिखिए।
37. किन्हीं दो आत्मकथा-लेखकों एवं उनकी एक-एक कृति का नाम लिखिए।
38. किन्हीं चार गद्य-विधाओं के नाम लिखिए।
39. पद्मसिंह शर्मा किस युग के लेखक हैं?
40. हिन्दी साहित्य के दो विचारात्मक निबन्धकारों के नाम लिखिए।
41. शिकार साहित्य के प्रसिद्ध लेखक का नाम लिखिए।
42. हिन्दी साहित्य का प्रचार-प्रसार करने वाली दो संस्थाओं के नाम लिखिए।
43. गद्य किसे कहते हैं?
44. हिन्दी गद्य का आविर्भाव किस शताब्दी में हुआ?
45. गद्य की उपयोगिता क्या है?
46. हिन्दी गद्य के प्राचीनतम प्रयोग किस भाषा में मिलते हैं?
47. ब्रजभाषा गद्य का सूत्रपात कब हुआ?
48. ब्रजभाषा गद्य के दो प्रसिद्ध लेखकों के नाम लिखिए।
49. खड़ीबोली गद्य का जनक किसे माना जाता है?
50. खड़ीबोली गद्य के प्रथम लेखक और उनकी प्रथम रचना का नाम लिखिए।
51. खड़ीबोली गद्य के चार उन्नायकों के नाम लिखिए।
52. हिन्दी खड़ीबोली का आविर्भाव कब हुआ?
53. हिन्दी गद्य के प्रसार में ईसाई पादरियों का क्या योगदान रहा?
54. भारतेन्दु से पूर्व हिन्दी गद्य के प्रमुख चार लेखकों के नाम लिखिए।
55. भारतेन्दु से पूर्व किन दो राजाओं ने हिन्दी गद्य के विकास में योगदान दिया?
56. गद्य और पद्य में क्या अन्तर है?
57. भारतेन्दु-युग की कालावधि लिखिए।
58. भारतेन्दु-युग के दो गद्य-लेखकों तथा उनकी एक-एक रचनाओं के नाम लिखिए।
59. भारतेन्दु-युग की प्रमुख पत्रिकाओं के नाम लिखिए।
60. भारतेन्दु-युग की दो प्रमुख विशेषताएँ लिखिए।
61. 'चन्द्रकान्ता' उपन्यास के लेखक का नामोल्लेख करते हुए युग का नाम लिखिए।
62. हिन्दी गद्य के विकास में भारतेन्दु-युग का महत्त्व लिखिए।
63. भारतेन्दु द्वारा सम्पादित दो पत्रिकाओं के नाम लिखिए।
64. 'कवि वचन सुधा' पत्रिका का सम्पादन-काल लिखिए।
65. हिन्दी साहित्य में भारतेन्दु जी के योगदान का संक्षिप्त परिचय दीजिए।

66. भारतेन्दुयुगीन भाषा की मुख्य विशेषता एक वाक्य में लिखिए।
67. द्विवेदी-युग का समय लिखिए।
68. द्विवेदी-युग के तीन प्रमुख गद्य-लेखकों और उनकी रचनाओं के नाम लिखिए।
69. हिन्दी-गद्य को आचार्य महावीरप्रसाद द्विवेदी की सबसे बड़ी देन क्या है?
70. द्विवेदी-युग की दो प्रमुख विशेषताएँ लिखिए।
71. 'सरस्वती' पत्रिका के प्रमुख सम्पादक का नाम लिखिए।
72. द्विवेदी-युग के दो प्रतिनिधि कहानीकारों के नाम लिखिए।
73. द्विवेदी-युग की चार प्रसिद्ध पत्रिकाओं के नाम लिखिए।
74. नागरी प्रचारिणी सभा की स्थापना किसने की?
75. द्विवेदी-युग के तीन उपन्यासकारों के नाम लिखिए।
76. द्विवेदी-युग के तीन प्रसिद्ध आलोचकों के नाम लिखिए।
77. द्विवेदी-युग के निबन्धों के विषय क्या थे?
78. हिन्दी साहित्य का प्रचार और प्रसार करनेवाली दो संस्थाओं के नाम लिखिए।
79. हिन्दी-गद्य की किन्हीं तीन नवीन विधाओं के नाम लिखिए।
80. हिन्दी-गद्य की दो प्रमुख विधाओं के नाम लिखिए।
81. विचारात्मक और भावात्मक निबन्ध में क्या अन्तर है?
82. हिन्दी गद्य-काव्य लेखकों में से किन्हीं दो लेखकों के नाम लिखिए।
83. विचारात्मक और वर्णनात्मक निबन्ध में अन्तर लिखिए।
84. हिन्दी की प्रथम कहानी का नाम लिखिए।

●●●

अध्ययन-अध्यापन

मनुष्य के भाषा-ज्ञान पर सबसे अधिक प्रभाव शिक्षा का पड़ता है, क्योंकि वह प्रत्यक्ष रूप से भाषा का ज्ञान कराती है। विद्यालय में अध्ययन और अध्यापन का कार्य भाषा के माध्यम से ही होता है। शिक्षा द्वारा ही साहित्य का विकास हुआ और साहित्य के विकास से भाषा बनी। नयी-नयी शैलियों को जन्म मिला। भाषा शिक्षा का सहारा पाकर दिन-पर-दिन बढ़ती गयी। अतः कहा जा सकता है कि शिक्षा और भाषा का चोली और दामन का साथ है।

भाषा का स्वरूप प्रारम्भ में स्थूल जगत् पर आधारित होता है जो क्रमशः अमूर्तता की ओर बढ़ते हुए गहन विचारों के आदान-प्रदान का माध्यम बनता है। भाषा के इसी वैचारिक स्तर पर अधिकार प्राप्त करना भाषा-शिक्षण का प्रमुख लक्ष्य है। यों तो भाषा का यह विकास स्वाभाविक रूप में होता ही रहता है, किन्तु विद्यालयों में सुनियोजित शिक्षण द्वारा इसके स्तर को उच्च तथा विकास की गति को सरल, रुचिकर तथा क्षिप्रतर बनाया जा सकता है। पाठ्य-पुस्तक सुनियोजित शिक्षा का प्रमुख साधन है।

भाषा का सीखना एक कौशल सीखने के समान है। यह प्रयोग से ही सीखी जा सकती है। अपने सामान्य जीवन में हम भाषा का प्रयोग दूसरों के विचार ग्रहण करते समय सुनने या पढ़ने में, अपना विचार व्यक्त करते समय बोलने या लिखने में तथा किसी विषय पर सोचने या विचारने में करते हैं। अतः भाषा-शिक्षण में हमें इनके प्रयोग की उपर्युक्त समस्त स्थितियों का उपयोग करना चाहिए। दूसरे शब्दों में बच्चों में वैचारिक स्तर की भाषा का विकास हम बालक को सुनने, बोलने, पढ़ने, लिखने तथा चिन्तन-मनन करने की योग्यताओं का विकास करके ही कर सकते हैं। अतः भाषा-शिक्षण के प्रमुख साधन गद्य की पाठ्य-पुस्तक का प्रयोग इस रूप में होना चाहिए कि उपर्युक्त समस्त क्षमताओं का विकास होता चले।

जूनियर हाईस्कूल स्तर तक बच्चों में भाषा-सम्बन्धी उपर्युक्त क्षमताओं का विकास सामान्य रूप में हो जाता है, पर माध्यमिक स्तर पर इनके सुदृढ़ीकरण की आवश्यकता बनी रहती है। अतः विविध भाषा-कौशलों का ध्यान रखते हुए माध्यमिक स्तर पर भाषा-शिक्षण के निम्नलिखित प्रमुख उद्देश्य निर्धारित किये जा सकते हैं :

(1) छात्रों और छात्राओं को मौन तथा व्यक्त पठन में कुशल बनाना। (2) उनके शब्द-भण्डार में पर्याप्त वृद्धि करना। (3) उन्हें विविध स्थितियों के अनुरूप लिखित एवं मौखिक अभिव्यक्ति में कुशल बनाना। (4) उन्हें शुद्ध, सशक्त और प्रभावपूर्ण भाषा के प्रयोग में कुशल बनाना। (5) उन्हें विविध साहित्यिक विधाओं और भाषा-शैलियों से अवगत कराना। (6) उनमें भावात्मक और साहित्यिक सौन्दर्य की अनुभूत्यात्मक क्षमता का विकास करना। (7) उनमें भाषा के वैज्ञानिक अध्ययन की रुचि उत्पन्न करना। (8) उनमें समीक्षा-शक्ति का विकास करना।

उपर्युक्त में से प्रत्येक उद्देश्य को छात्र-छात्राओं में अपेक्षित व्यावहारिक परिवर्तन के सन्दर्भ में विश्लेषित करने पर अनेक विशिष्ट उद्देश्य सामने आयेंगे। उदाहरणार्थ, मौन-पठन में कुशलता प्राप्त कराने का तात्पर्य है कम-से-कम समय में अधिकाधिक मुद्रित संकेतों (पठन-सामग्री) को देखकर उनका अर्थ ग्रहण कर लेने की क्षमता का विकास करना। इसके लिए पर्याप्त पठन-अभ्यास अपेक्षित होगा। इसी प्रकार व्यक्त-पठन में कुशलता प्राप्त कराने का तात्पर्य है उच्चारण की शुद्धता, स्वर के भावानुकूल आरोहावरोह, अर्थ की स्पष्टता, उचित गति और प्रवाह आदि का ध्यान रखते हुए मुद्रित सामग्री को दूसरों के समक्ष प्रस्तुत करने की क्षमता विकसित करना। मौखिक और लिखित अभिव्यक्ति के अन्तर्गत भी कई बातें सम्मिलित हैं, जैसे उच्चारण, वर्तनी, वाक्यों की रचना तथा शब्दों के प्रयोग में शुद्धता, अभिव्यक्त विचारों में व्यवस्था तथा भाषा में प्रभविष्णुता आदि। आशा की जाती है कि अध्यापक अन्य उद्देश्यों से विस्तृत रूप में परिचित होंगे।

कक्षा में प्रस्तुत पाठ्य-पुस्तक का प्रयोग इस रूप में होना चाहिए कि भाषा-शिक्षण के उपर्युक्त समस्त उद्देश्यों की पूर्ति होती चले। इस मूल तथ्य को ध्यान में रखते हुए अध्यापक भाषा-शिक्षण की कोई भी विधि अपना सकता है। यह भी ध्यान में रखना होगा कि उस विधि के सोपान उचित क्रम में हों तथा सम्पूर्ण पाठन-कार्य में रोचकता बनी रहे। सभी पाठों को एक ही ढंग से पढ़ाना अनिवार्य नहीं है। पाठों की प्रकृति के अनुसार प्रत्येक पाठ में अलग-अलग बातों पर बल देना होगा। फिर भी कुछ बातें अधिकांश पाठों के लिए महत्त्वपूर्ण हैं और पाठों को पढ़ाते समय हमें उनका ध्यान रखना चाहिए।

कक्षा में पाठ किस प्रकार आरम्भ किया जाय, यह प्रश्न अत्यन्त महत्त्वपूर्ण है। प्रशिक्षण महाविद्यालयों में प्रत्येक पाठ को नवीन मानकर प्रस्तावना देने की आवश्यकता पर बल दिया जाता है। इसका वास्तविक अभिप्राय न समझकर येन-केन-प्रकारेण पाठ का शीर्षक निकलवाने को ही प्रस्तावना का उद्देश्य मान लिया जाता है। पाठ्य-पुस्तकें छात्रों के पास रहती हैं और अधिकांश छात्र पाठों के शीर्षकों से परिचित रहते हैं। अतः इस प्रकार की प्रस्तावना प्रायः नीरस और उद्देश्यरहित हो जाती है। प्रस्तावना का उद्देश्य पाठ के प्रति रुचि उत्पन्न करना होना चाहिए। इस दृष्टि से यह अधिक उपादेय होगा कि जो पाठ अगले दिन प्रारम्भ करना हो उसके विषय में पहले ही दिन कुछ बातचीत की जाय और छात्रों को सम्पूर्ण पाठ घर से पढ़कर आने के लिए प्रेरित किया जाय। इससे छात्र पाठ की विषय-वस्तु से न्यूनाधिक रूप में परिचित हो जायँगे और अगले दिन एक-एक अनुच्छेद लेकर उसका विस्तृत विवेचन करने में सुविधा होगी। तात्पर्य यह है कि पाठों को पढ़ाने में पूर्ण से अंश की ओर चलने के सिद्धान्त का पालन करना अधिक लाभप्रद होता है।

यह सम्भव है कि कुछ छात्र घर से पाठ पढ़कर न आयें। अतः कक्षा में पाठ प्रारम्भ करने से पूर्व आवश्यक होगा कि पढ़कर आये हुए छात्रों की सहायता से सम्पूर्ण पाठ की विषय-वस्तु पर दो-तीन प्रश्नों द्वारा सामान्य चर्चा की जाय। तत्पश्चात् विस्तृत अध्ययन के लिए पाठ की एक-एक अन्विति ली जाय।

यह विवादास्पद हो सकता है कि कक्षा में विस्तृत अध्ययन के लिए ली गयी अन्विति का पठन किस रूप में हो–मौन-पठन के रूप में अथवा व्यक्त-पठन के रूप में। यह निश्चय बहुत-कुछ कक्षा के स्तर और पाठ के स्वरूप पर निर्भर करेगा। यदि पाठ कक्षा के लिए कठिन है तो उसका पठन व्यक्त रूप में होना चाहिए। शिक्षक को स्वयं आदर्श पाठ देकर एक या दो बालकों से भी पढ़वाना चाहिए और तत्पश्चात् व्याख्या और भाषा-कार्य प्रारम्भ करना चाहिए। किन्तु ऐसी स्थिति कुछ ही पाठों अथवा विद्यालयों में आ सकती है। अधिकांश पाठ स्तरानुकूल होते हैं। अतः माध्यमिक कक्षाओं में मौन-पठन को ही महत्त्व दिया जाना चाहिए। मौन-पठन को सोद्देश्य बनाने की दृष्टि से अध्यापक को चाहिए कि वह प्रेरणात्मक अध्यापकीय कथन में कुछ प्रश्न उठाये जिनका समाधान सम्बन्धित अन्विति में दिये गये विचारों से होता हो। तत्पश्चात् वह उसके मौन-पठन का आदेश दे। पठन की गति बढ़ाने की दृष्टि से आवश्यक होगा कि अध्यापक मौन-पठन के लिए समय निर्धारित कर दे।

सम्पूर्ण अन्विति का पठन हो जाने के पश्चात् अध्यापक को चाहिए कि वह उसमें निहित तथ्यों का प्रश्नों द्वारा विश्लेषण कराये। साथ ही उसके सम्बन्ध में तर्क-वितर्क और आलोचना करने तथा निष्कर्ष निकालने का उन्हें अवसर भी दिया जाय। प्रश्न और अध्यापकीय कथन ऐसे होने चाहिए जिनसे छात्रों को अन्य पुस्तकों एवं पत्र-पत्रिकाओं को पढ़ने की प्रेरणा मिले। जहाँ आवश्यक हो, बीच-बीच में विलोम, पर्याय, शब्द-रचना, पंक्तियों की व्याख्या, भाषा-शैली, चरित्र-चित्रण आदि से सम्बन्धित प्रश्न भी किये जायँ। शब्दार्थ बोध कराने में व्युत्पत्तिमूलक अर्थ और प्रयोग पर विशेष ध्यान दिया जाय। सम्पूर्ण कार्य यथासम्भव प्रश्नों के माध्यम से होना चाहिए और छात्रों को आत्माभिव्यक्ति का अवसर देना चाहिए। छात्रों द्वारा दिये गये उत्तरों को आवश्यकतानुसार सुधार कर छात्रों के समक्ष रखने से छात्रों का पाठ के विकास में समुचित योगदान होता है और कोई बात बलात् लादी जा रही नहीं प्रतीत होती। इससे कक्षा का वातावरण सजीव रहता है और पाठ में रोचकता बनी रहती है।

उपर्युक्त कार्य करते समय अध्यापक को आवश्यकतानुसार श्यामपट्ट-कार्य भी करते रहना चाहिए। शब्दार्थ या व्याख्या लिखने में संक्षिप्तता और सरलता का ध्यान रखना चाहिए। लिखावट का सुन्दर होना आवश्यक है ही, लिखने की गति भी अपेक्षित स्तर की होनी चाहिए। आवश्यकतानुसार श्यामपट्ट के दो खण्ड किये जा सकते हैं–एक भाग सन्धि-विच्छेद, समास, शब्दार्थ आदि के लिए और दूसरा भाग पाठ-सारांश के लिए। पर इसकी आवश्यकता कुछ ही पाठों में पड़ेगी। अधिकांश पाठों में श्यामपट्ट-कार्य सरल शब्दार्थ, विलोम, सन्धि, समास, प्रत्यय, उपसर्ग आदि द्वारा शब्द-रचना के स्पष्टीकरण आदि तक सीमित रहेगा। अच्छे श्यामपट्ट-कार्य से बच्चों को सुलेख और शुद्ध वर्तनी में विशेष सहायता मिलती है।

सम्बन्धित अन्विति का सम्पूर्ण कार्य समाप्त हो जाने पर यदि पाठ मौन-पठन से प्रारम्भ हुआ है तो अध्यापक को चाहिए कि वह अब उसका आदर्श पाठ प्रस्तुत करें। तत्पश्चात् एक-दो अच्छे छात्रों से सस्वर पठन कराकर पिछड़े हुए अथवा साधारण स्तर के छात्रों के समक्ष आदर्श पठन के नये नमूने प्रस्तुत किये जायँ, फिर साधारण स्तर के बच्चों को पढ़ने का अवसर दिया जाय।

इसी प्रकार प्रत्येक अन्विति के सम्बन्ध में उपर्युक्त कार्य कराया जाय। पाठ के अन्त में प्रमुख पाठ बिन्दुओं की आवृत्ति भी हो जानी चाहिए। इसके लिए अध्यापक रोलर बोर्ड पर प्रश्न, अभ्यास अथवा सारांश लिखकर ला सकता है और उनकी

सहायता से पुनरावृत्ति करा सकता है। पुनरावृत्ति में प्रमुख शिक्षण बिन्दु ही रखे जाने चाहिए और उनमें वैचारिक और भाषायी, दो प्रकार की सामग्री का समावेश होना चाहिए।

पाठ के अन्त में कुछ गृह-कार्य भी दिया जाना चाहिए जिससे छात्र घर जाकर पुनः उस पाठ को पढ़ें। गृह-कार्य के द्वारा शिक्षक विद्यार्थियों की लिखित अभिव्यक्ति तथा तत्सम्बन्धी गुण-दोषों को जान सकता है। साथ-ही-साथ गुणों के विकास और दोषों के निवारण का प्रयत्न कर सकता है। इसलिए गृह-कार्य के लिए दिये गये प्रश्न अर्जित ज्ञान पर आधारित हों और अधिक विस्तृत न हों, अपितु विद्यार्थी अपनी बुद्धि से उन प्रश्नों का उत्तर दें। गृह-कार्य पाठ के सारांश, किन्हीं पंक्तियों तथा अनुच्छेदों की व्याख्या, शब्दों का वाक्यों में प्रयोग, शब्द-रचना, पाठ की सामग्री का पाठ से भिन्न स्थिति एवं क्रिया में प्रस्तुतीकरण आदि से सम्बन्धित हो सकता है। आवश्यकतानुसार अगला पाठ, किसी पत्र-पत्रिका का कोई लेख या किसी अन्य पुस्तक की सामग्री भी पढ़ने को दी जा सकती है। ऐसा करने से विद्यार्थियों की विचार-शक्ति भी बढ़ेगी और उनका बौद्धिक विकास भी होगा।

भाषा-शिक्षण की दृष्टि से परीक्षाओं का भी अत्यधिक महत्त्व है। छात्र प्रायः उन्हीं बातों पर विशेष ध्यान देते हैं जो परीक्षा में पूछी जाती हैं। अतः मासिक, सत्रीय और वार्षिक परीक्षाओं में उन समस्त शिक्षण-सामग्रियों पर प्रश्न देने चाहिए जिन्हें अध्यापक आवश्यक समझते हों। इन परीक्षाओं में माध्यमिक शिक्षा परिषद् की समापन परीक्षा का अनुकरणमात्र नहीं होना चाहिए। अच्छा हो यदि गृह-परीक्षाओं में श्रवण, पठन, लेखन, मौखिक अभिव्यक्ति आदि समस्त भाषा-कौशलों का समावेश किया जाय जिससे जूनियर हाईस्कूल स्तर पर सीखे गये भाषा-कौशलों का सुदृढ़ीकरण हो सके। इससे निश्चय ही बालकों की भाषा-सम्बन्धी शैक्षिक उपलब्धि उच्च-स्तर की होगी और अन्य विषयों के उपलब्धि-स्तर पर भी इसका अनुकूल प्रभाव पड़ेगा। प्रश्न-पत्रों की रूपरेखा ऐसी होनी चाहिए कि छात्रों को सभी पाठों को पढ़ने की प्रेरणा मिले। इसके लिए वस्तुनिष्ठ, लघु उत्तरीय तथा निबन्धात्मक प्रश्नों का उचित अनुपात में प्रयोग करते हुए उनके अन्तर्गत अधिकाधिक पाठ्यक्रम का समावेश किया जा सकता है। इस पाठ्य-पुस्तक के पाठों के अन्त में विविध प्रकार के प्रश्न और अभ्यास दिये गये हैं। उनमें विविध उद्देश्यों को समाविष्ट करने का प्रयत्न किया गया है। कुछ प्रश्न पाठ के सारांश पर आधारित हैं तो कुछ तथ्यों के तर्कपूर्ण विवेचन, निष्कर्ष-ग्रहण, चरित्र-चित्रण, भाषा-शैली, व्याख्या, शब्द-रचना तथा सैद्धान्तिक व्याकरण से सम्बन्धित हैं। व्याख्या-लेखन में निपुणता लाने के उद्देश्य से कुछ प्रत्यक्ष या सहायक प्रश्न-अभ्यास में भी दिये गये हैं; प्रश्न-पत्र की दृष्टि से उनकी उपादेयता स्पष्ट ही है। प्रश्नों के स्वरूप में भी विविधता का ध्यान रखा गया है। अध्यापकों को चाहिए कि वे पाठों की समाप्ति के मूल्यांकन में तो इसका प्रयोग करें ही, इसी प्रकार के अन्य प्रश्नों की रचना कर गृह-परीक्षाओं में भी उनका प्रयोग करें।

पाठ्य-पुस्तक का सम्बन्ध विविध पाठ-सहगामी क्रियाओं से भी जोड़ा जा सकता है। उदाहरणार्थ, पाठों में दिये गये विचार, समीक्षकों के मत तथा लेखकों के जीवनवृत्त आदि भाषण, वाद-विवाद तथा अभिनय के विषय बनाये जा सकते हैं। विद्यालयों में हिन्दी कक्ष की व्यवस्था की जा सकती है और वहाँ छात्र-छात्राओं को लेखकों के जीवन-वृत्त, उनकी रचनाओं, विशेषताओं एवं भाषा और व्याकरण से सम्बन्धित चित्र और चार्ट बनाकर रखने के लिए उत्साहित किया जा सकता है।

सारांश यह है कि गद्य की पाठ्य-पुस्तक विविध भाषा-कौशलों के विकास का सर्वोत्तम साधन हो सकती है। अध्यापकों को चाहिए कि वे इसे पर्याप्त महत्त्व दें और इसके प्रयोग में मौलिकता लाकर इसके माध्यम से छात्रों की भाषा-योग्यता के स्तर को ऊँचा उठाने का प्रयास करें।

यह शंका उठायी जा सकती है कि यदि उपर्युक्त विधि से ही प्रत्येक पाठ पढ़ाया जाय तो अध्यापन नीरस हो सकता है और यह भी सम्भव है कि वर्ष के अन्त में पुस्तक समाप्त ही न हो। पहले ही कहा जा चुका है कि प्रत्येक पाठ में उपर्युक्त समस्त सोपानों का अनुसरण आवश्यक नहीं है। अध्यापक जहाँ आवश्यक समझें, अन्य विधियाँ अपना सकते हैं। महत्त्वपूर्ण बात यह है कि हाईस्कूल स्तर पर छात्रों की मौखिक और लिखित भाषा में अपेक्षित सम्प्राप्ति पर विशेष ध्यान दिया जाय। अपेक्षित उद्देश्य पूर्ण हो जाने पर अध्यापक कतिपय बातें छोड़ भी सकते हैं और कुछ अन्य आवश्यक बातों का समावेश भी कर सकते हैं। उदाहरणार्थ, यदि अध्यापक देखता है कि उसकी कक्षा के छात्र सुन्दर मुखर वाचन कर लेते हैं तो इसका अभ्यास यदा-कदा ही करना चाहिए। इसी प्रकार यदि अध्यापक देखता है कि इस स्तर पर भी छात्रों को श्रुतलेख में अभ्यास देने की आवश्यकता है तो वह इसका पाठ्यक्रम में उल्लेख न होते हुए भी अपने शिक्षण में स्थान दे सकता है। तात्पर्य यह है कि अब तक जो भी बातें कही गयी हैं उन्हें सुझावमात्र समझना चाहिए। अध्यापक अपने अनुभव के आधार पर अपनी विधियाँ निश्चित करने में स्वविवेक का प्रयोग करें। ●●●